Vol 4 Issue 12 Jan 2015

ISSN No : 2230-7850

International Multidisciplinary Research Journal

Indian Streams Research Journal

Executive Editor
Ashok Yakkaldevi

Editor-in-Chief
H.N.Jagtap

Welcome to ISRJ

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2230-7850**

Indian Streams Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

International Advisory Board

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

......More

Editorial Board

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.isrj.org

Indian Streams Research Journal
ISSN 2230-7850
Impact Factor : 3.1560(UIF)
Volume-4 | Issue-12 | Jan-2015
Available online at www.isrj.org

सिन्धु घाटी की सभ्यता हडप्पा - मोहनजोदडों : एक सिंहावलोकन

Chandrikasinh Somvanshi[1] and Jashwantkumar Premjibhai Chandhari [2]

[1]Research Scholor,Teacher's Fellowship in History , Adipur (Kutch).
Lunawadd, Panchmahal, (Gujarat)

सांराश :-हडप्पी सभ्यता का उद्‌गम एंव बिस्तार - लगभग अर्ध्द शताब्दी पूर्व तक वैदिक सभ्यता को ही भारत की प्राचीनतम सभ्यता माना जाता था। वस्तुत : भारतवर्ष का इतिहात तो मानव सभ्यता के प्राचीन पाषाण युग के इतिहास केसाथ ही प्रारम्भ हो परन्तु देश की सुविकसित सभ्यता एंव संस्कृति का इतिहास हडप्पा सभ्यता (इसे सिन्धु घाटी की सभ्यता भी कहते है) से ही प्रारम्भ होता है, जो वौदिक सभ्यता से भी प्राचीन है।

प्रस्तावना :

सर्वप्रथम 1826 ई में मसन नाके एक ॲंग्रेज पर्यटक ने हडप्पी के खण्हरों को देखा । उसके बाद 1831 में कर्नल बर्नस से भी हडप्पा के खण्डहरों को देखा। मेसन और बर्नस – दोंनों के उल्लांखों से पता चलता है कि हडप्पा के खण्डहर लगभग चार किलोमीटर की परिधि में फैले हुये थे और पश्चिमी टीले पर टूटी – फूटी गढी थी ।1853 और 1857 में कनिंघम ने हडप्पा के खण्हरों का निरीक्षण किया । 1856 ई में जब भारत सरकार लाहौर से कारची तक रेल्वे लाइन का निर्माण कार्य में ईटों की आवश्यकता पडी । फलतः आसपास के खण्डहरो से ईटें निकाली गई । इन्ही खण्डहरों में पंजाब के माण्टगामरी जिलें में स्थितं हडप्पा का खण्डहरो भी था हडप्पा लाहौर से लगभग 100 मी दूर दक्षिण – पश्चिम में रावी नदी के तट पर है । परन्तु उस समरू तक लोंगों का ध्यान इस ओर ना जा सका कि हडप्पा का खण्डहर किसी प्राचीन सभ्यता का अवशेष अपने अचंल में छिपाये हुये किसी पुरातत्ववेत्ता की प्रतीक्षा में है।

दीर्घकाल का उपेक्षा के बाद पुरातत्त्वपेक्षा सिन्धु प्रदेश के ऐतिहासिक महत्त्व से अवगत हुये और उन्होंने उस क्षेत्र में उत्खनन प्रारम्भ किया ।सर्वप्रथम महत्त्वपूर्ण उत्खनन 1922 में ही हुआ । उत्खनन कार्य करवाने वालों में श्री दयाराम साहानी तथा श्री माधोस्वरूप वत्स अग्रणीय थे। यहॉ की खुदाई में एक भव्य नगर के भग्नावशेष मिले है । इसके बाद 1922 ई. में श्री रखालदास बनर्जी के नेतृत्व में सिन्ध प्रान्त के लरकाना जिले में खुदाई का काम किया गया ,जिसके परिणामस्वरूप मोहनजोदडों के भव्य नगर के अवशेष उपलब्ध हुये । यदयपि इन दोनों स्थानों (हडप्पा और मोहनदडों) में लगभग 350 मील की दूरी है किन्तु दोनों स्थानों की खुदाई में प्राप्त अवशेषों में अद्‌भुत साम्यता भी और उनके तुलनात्क अध्ययन के आधार पर सर जॉन मार्शल ने यह सिद्ध कर दिया की ये अवशेष किसी अति प्राचीन पूर्व –ऐतिहासिक सभ्यता के प्रतीक हैं ।

इस प्राचीन सुविकसित सभ्यता की खोज का निरन्तर चलता रहा। अर्नेस्ठ मैके ,एन. जी. मजूमदार , सर ऑरेल स्टीन , एचत्र हारग्रीज ,पिगट , व्हीलर , रंगनाथराय सांकलिया , बी. बी. लाल, वी. के. थापर , फजल अहमद , यज्ञदत्त शर्मा ,जगपति जोशी , रवीन्द्रसिंह विष्ट आदि पुरातत्ववेत्ताओं ने खोज और खनन के कार्य को आगे बढाया ।

प्राचीन भारत का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास इल डॉ. कालूराम शार्माव डॉ. प्रकाश ब्यास , 57 से 79 , 332 से 338 प्रथम संस्करण 2004 (ISBN 81–7056–259–7) पंचशील प्रकाशील , फिल्न कॉलोनी , चौना रास्ता,जयपुर – 302 003 (राज.)

इस लोगों की खोजा के कलास्वरूप पता चला कि यह सभ्यता केवल सिन्धु घाटी तक ही सीमित नही रही बल्कि पंजाब , सौराष्ट्र , राजस्थान , बलूचिस्तान से भी इस सभ्यता से साम्य रखने वाले अनेक अवशेष प्राप्त हुये हैं । प्रारम्भ में ईसा से लगभग तीन हजार पूर्व की सुमेरियन सभ्यता के साथ इसकी समानता देखते हुए इसका नाम "इण्डो–सुमेरियन सभ्यता रखा गया । परन्तू सिन्धुघाट में इस सभ्यता के साथ के विस्तार एवं इसकी निजी विशेषताओं कों देखते हुये इस भूखण्ड विशेष के नाम पर इसका नाम 'सिन्धुघाटी – सभ्यता ' घोषित किया गया बाद में जब इस सभ्यता के अवशेष बलूचिस्तान ,गंगा–युमना के मैदान , गुजरात – काठियावाड़ और राजस्थान में भी मिलने लगे तो हड़प्पा की केन्द्रीय स्थिति को ध्यान में रखते हुये इसका नाम '' हड़प्पी

की सभ्यता '' राखा गया । प्रो. केदारनाथ शास्त्री का मानना है कि , '' सिन्धु सभ्यता का आदि – केन्द्र हड़प्पा है ।'' परन्तु वास्तव में दोनों ही भौगालिक नाम इस विस्तृत सभ्यताओं का पूरा बोध कराने में असमर्थ है । हो सकता है कि जब इस काल की लिपि पढ़ी जा सके तो इसका नाम देना सम्भव हो सके । परन्तु उस समय की प्रतीक्षा तक 'हड़प्पा सभ्यता ' दोनों नाम स्वीकार करता ही उचित होगा।

हडप्पा सभ्यता का उद्गम – हडप्पा सभ्यता के अध्ययन से सम्बन्धित अनेक प्रश्नों में सबसे जटित प्रश्न के उत्तर में तरह – तरह के विचार प्रस्तुत किये गये है , जैसे की – यह सुमेरियन सभ्यता की नींव पर आधारिक है ; यह अपके – आप में एक स्वतन्त्र स्थानीय विकसित सभ्यता की है। उपर्युक्त विचारों का एक मुख्य कारण सम्भवत : यह रहा हो की उत्खनन के प्रारम्भिक दौर में इसके पुर्ववर्ती विकास के कोई संकेत नही प्राप्त हुये थे । इसीलिये प्रसिध्द पुरातत्वज्ञ हाइने गेल्दनर की तो यह मान्यता थी कि यह सभ्यता जैसे यकायक ही पैदा हो गयी थी । परन्तु बाद की खुदाइयों में इस सभ्यता के स्थानीय उद्गम के बारे में महत्वपुर्ण नयी सामग्री उपलब्ध हुई है । दुर्भाग्यवश , भुमिगत जल – रिसाव के कारण पुरातत्वज्ञ अभी तक मोहनजोदडों में निम्नतम स्तरों का अनुसन्धान नही कर पाये है । बलूचिस्तान और सिन्ध के खुदाइयों से संकेत मिलते है की वहॉ ई.पू. चौथे और तीसरे सहस्त्राब्द में कृषि पर आधारित संस्कृतियॉ विदयामान थी जो प्रारम्भिक हड़प्पा सभ्यता के साथ बहूत कुछ समानता प्रकट करती है । डब्ल्यू ए. फेयर सर्विस. बी. दे कार्दी आदि विद्वानों ने अपनी खोजों के द्वारा यह मत प्रतिपादित किया है कि इन संस्कृतियों कम साथ हड़प्पाई बस्तियों ने काफी लम्बे समन तक सम्पर्क बनाये रखा था । चूँकि सिन्ध में कृषि का उदय बाद में हुआ था अज : विद्वानों की मान्यता है कि बलूचिस्तान और दक्षिण अफगानिस्तान के कुछ गण इस प्रदेश (सिन्ध) तक पहुँच गये थे ।

इस बात को सभी स्वीकार करते है कि सिन्धु घाटी में हड़प्पाई बस्तियॉ यकायक ही और एक साथ ही नही पैदा हुई थी । निश्चय ही कोई एक केन्द्र राह होगा , जहॉ शहरी संस्कृति सबसे पहले विकसित हुई होगी और जहॉ से चलकर लोगों ने और आगे जाकर बस्तियॉ बसाई होगी । फ्रॉसीसी पुरातत्वज्ञ जे. एम कजाल ने अमरी बस्ती से सम्बध्द कार्य पर काफी परिश्रम किया। उन्होंने प्रारम्भिक अवस्था से लेकर , जब अधिकांश मिटटी के बर्तन चाक के बिना हाथ से बनाये जाते थे , जब इमारतों नही थी और धातुओं का प्रयोग नगण्य था , अलंकृत मिटटी के बर्तनों और कच्ची ईटों से बनी अधिक टिकाऊ इमारतों तक के विकास का अध्ययन किया । उनके मतानुसार प्राक् – हड़प्पा काल के निम्न स्तर बलूचिस्तान में कृषि पर आधारित प्रारम्भिक संस्कृतियों के साथ मेल खाते है और बाद वाले स्तरों में सिन्धु घाटी की प्रारम्भिक हड़प्पाई बस्तियों के समय के मिट्टी के बर्तन मिलते है । उत्खनन से यह स्पष्ट हो गया कि अमरी संस्कृति की लाक्षणिक परम्पराएॅ हड़प्पा परम्पराओं के साथ – साथ विदयमान थी ।

हडप्पा संस्कृति और पूर्ववर्ती अभरी संस्कृति के मध्य किस प्रकार का सम्बन्ध था, इस पर विद्वान लोग एकमत नहीं है। जहॉ ए, घोष दोनों के मध्य जननिक सम्बन्ध स्वीकार करते हैं , वहॉ कजाज महोदय की मान्यता है कि हडप्पा संस्कृति अमरी में अपने–आप ही नहीं पैदा हो गई थी, बल्कि उस पर धीरे–धीरे थोपी गई थी। स्वयं हडप्पा में नगर की प्राचीर के नीचे अमरी संस्कृति के मिट्टी के बर्तन पाये गये थे ।उपर्युक्त दोनों ही बातें यह स्पष्ट करती है कि सिन्धुघाटी की कृषि परम्पराओं के आधार पर विकसित हुई थी, यद्यपि वह एक नई मंजिल, कांस्य–युग की नागर संस्कृति को प्रकट करती है।

1953 में फजल अहमद के नेतृत्व में पाकिस्तानी पुरातत्वजों ने वर्तमान खैपुर के निकट कोट दीजीं में उत्खनन किया। उत्खनन में उपलब्ध सामग्री से पता चलता है कि इस क्षेत्र में प्राक–हडप्पा काल में एक विकसित संस्कृति विद्यमान थी। पाक विद्वानों ने यहॉ एक गढ(कोट) और बाकायदा बने आवासीय मकानों को खोज निकाला है। यहॉ से प्राप्त प्रारम्भिक मिट्टी के बर्तन, सिन्ध और बलूचिस्तान की कृषि – बस्तियों के मिट्टी के बर्तनों के साथ और सिन्धघाटी में प्राक–हडप्पा मिट्टी के बर्तनों में समानता प्रकट करते है, जबकि बाद के मिट्टी के बर्तन हडप्पा में उपलब्ध मिट्टी के बर्तनों के समकक्ष है। इस तथ्य से स्थानीय मिट्टी के बर्तनों के समकक्ष है। इस तथ्य से स्थानीय परम्पराओं के विकासकम का पता चल जाता है। 1952 से 1959 के मध्य भारतीय पुरातत्वज्ञों ने कालीबंगा (राजस्थान) में दो टीलों की खुदाई करते हुये हडप्पा सभ्यता के समकालीन नगर तथा हडप्पा से भी प्राचीन सभ्यता के अवशेष खोज निकाले है। विद्वानों का मानना है कि हडप्पा–पूर्व की कालीबंगा संस्कृति स्थाजीय थी और पास वाले टीले पर बनी इमारतें सम्भवतः हडप्पा संस्कृति के संस्थापकों द्वारा बनायी गयी थी। इससे हडप्पा संस्कृति के उदय तथा विकास का प्रारम्भिक हडप्पा संस्कृति तथा परम्पराओं के साथ तालमेल बैठाना सुगम हो गया है। पिछले दशको में भारतीय पुरातत्वज्ञों ने भारत में हडप्पा संस्कृति तथा प्रारम्भिक हडप्पा संस्कृति के अनेक नये स्मारक खोज निकाले है। उनकी खोजों ने हडप्पा सभ्यता के उदय के बारे में नये सिध्दान्तों को जन्म दिया है। यह तो सभी स्वीकार करते हैं कि हडप्पा सभ्यता स्थानीय प्राक–हडप्पा संस्कृति तथा प्रारम्भिक हडप्पा संस्कृति से ही विकसित हुई थी।परन्तु अब यह नयी विचार भी सामने आया है कि प्रारम्भिक हडप्पा–संस्कृतियों, जो ग्रामीण संस्कृतियॉ थी और हडप्पा सभ्यता, जो नागर सभ्यता थी– साथ–साथ विद्यमान रही हो और उनका विकास भी साथ–साथ हुआ हो। वास्तव में मुद्राओं, लेखन कला, मौलिक मृद्भाण्ड, अलंकरण आदि लक्षणों से युक्त बडी शहरी बस्तियों का अस्तित्व मे आना विकसित हडप्पा सभ्यता के जन्म का सूचक था।

सभ्यता का विस्तार हडप्पा– बीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक में जब हडप्पा सभ्यता के अनुसन्धान का कार्य शुरू हुआ ही था,उस समय विद्वानो का मानना था कि आरम्भ में हडप्पाई बस्तियों केवल सिन्धुघाटी में ही मिली थी परन्तु बाद में पुरातात्विक खोजों से यह प्रकट कर दिया कि हडप्पा सभ्यता एक विशाल क्षेत्र पर फैली हुई थी। अब तक की पुरातात्विक खोजों से यह प्रकट कर दिया कि हडप्पा सभ्यता एक विशाल क्षेत्र पर फैली हुई थी। अब तक की पुरातात्विक खोजों ने यह सिध्द हो गया कि इस सभ्यता का विस्तार अफगानिस्तान, बलूचिस्तान, सिन्ध, पंजाब, राजस्थान, गुजरात एवं उत्तरी भारत में गंगा घाटी तक व्याप्त था।

हडप्पा और मोहनजोदडो, इस सभ्यता के दो प्रमुख केंन्द्र रहें होंगें। श्री पिगट के मतानुसार ये दोनों नगर एक बडे

साम्राज्य की दो राजधानियाँ रही होगी। अफगानिस्तान में क्वेटा, कीली, गुलमुहम्मद, मुण्डिगक नदी के किनारे– किनारी तथा डम्बसदात में भी हडप्पा सभ्यता के प्राचीनतम अवशेष प्राप्त हुये है। बलूचिस्तान के उत्तर–पूर्व में लोंरलाय घाटी तथा झोब नदी की घाटी में भी इस सभ्यता सम्भवतः हडप्पा सभ्यता का ही प्रारम्भिक रूप रही होगी। सिन्ध में अमरी नामक स्थान तथा इसके उत्तर–पूर्व में स्थित कोटदीजी, अलीमुराद और चन्हुदडी आदि स्थलों से जा अवशेष से जा अवशेष मिले है, उन्हें भी इस सभ्यता का प्रारम्भिक रूप माना जा सकता है। इसी प्रकार, राजस्थान प्रदेश के बीकानेर क्षेत्र में कालीबंगा नामक स्थान पर जो अवशेष मिले है, उनमें से कुछ तो हडप्पा संभ्यता से भी पहले के प्रतीत होते है और शेष हडप्पा सभ्यता से साम्य रखते है। पंजाब में रोपड, बाडा और संधोल तथा हरियाणा में राजीगढी, बणावली और मीत्ताथल; गुजरात में लोथल, रंगपुर, रोजदी, मालवण और सुकोटडानामक स्थानों से प्राप्त अवशेष भी हडप्पा सभ्यता के समकालीन प्रमाणित होते है। उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अविभाजित भारत में यह सभ्यता पश्चिम में अरब सागर के तट के समीप सुत्कगेण्डोर से लेकर पूर्व में आलमगीरपूर (मेरठ जिला) एवं विलुप्त सरस्वती नदी के किनारी तथा उत्तर में शिमला की पहाडियों की तलहटी से लेकर दक्षिण में नर्बदा और ताप्ती नदियों के मध्य स्थित भगवार तक के क्षेत्र में फैली हुई थी। श्री रंगनाथ राव ने इस सभ्यता के क्षेत्र का विस्तार पूर्व से पश्चिम में लगभग 1600 किलोमीटर और उत्तर से दक्षिण 1100 किलोमीटर नापा है। इस विस्तृत भू–भाग में कुछ विशाल नगर, कुछ कस्बे तथा कुछ ग्राम थे। नगरों के नाम हैं– हडप्पा मोहनजोदडो, चन्हुदडो, लोथल, कालीबंगा, हिसार एवं बणावी (बनवाली)। लोथल समुद्री व्यापार का केन्द्र रहा होगा; जबकि मकरान के समुद्र तटवर्ती सुत्कगेण्डोर, सोत्काकोह और बालाकोट ने पश्चिमी एशिया के साथ होने वाले व्यापार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई होगी।

सर जॉन मार्शल के मतानुसार इस सभ्यता का विस्तार गंगा, यमुना, नर्मदा और ताप्ती की घाटियों तक हुआ था और इधर जो विभिन्न क्षेत्रों में उत्खनन हुए है उनमें मार्शल के मत की पुष्टि होती है। उत्तर–पूर्व में इस सभ्यता के अवशेष रूपड(पंजाब) तक मिले है। अफगानिस्तान की सीमा,बन्नू, और झोब की ओर भी इस सभ्यता का विस्तार हुआ था।गंगा की घाटी (बक्सर) और बंगाल में भी प्रागैतिहासिक युग की वस्तुएँ मिली है। काठियावाड के लिम्बडी स्टेट में भी इसके अवशेष अभी मिले है। पश्चिम में कलात स्टेट और बलूचिस्तान के पूर्वी भाग में भी इस सभ्यता का विस्तार हुआ था। सिंधू और पंजाब में तो यह सभ्यता समान रूप से फूली–फूली।गुजरात के लोथल नामक स्थान से जो अवशेष अभी मिले है, उनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि यहाँ सिंधुघाटी की सभ्यता का प्रसार पूर्णरूपेण हुआ था। एस. आर. राव ने लोथल का उत्खनन किया है। कालीबंगा (राजस्थान) की खुदाई से भी तत्कालीन सभ्यताओं के अवशेष मिले है। इसके उत्खननकर्ता डॉ.बी.बी.लाल है। इस सभ्यता का क्षेत्रफल अन्य प्राचीन सभ्यताओं से कई गुणा बडा था। एन. जी. मजूरदार ने दक्षिण में हैदराबाद से लेकर उत्तर में जैकोबाबाद तक बसे हुए ऐसे ही शहरों की एक श्रृंखला के ध्वंसावशेषों का पता लगाया था। अत्याधुनिक उत्खनन से स्पष्ट होता है कि काठियावाड से मकरान तक और सौराष्ट्र से पूर्वी राजस्थान एवं पंजाब तक इस सभ्यता का विस्तार था।

प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास (प्रागैतिहासिक काल से 1200 ई. तक) by प्रॉ. राधाकृष्ण चौधरी, पृ .22 से 31 ए परिवध्दित सपतम संस्करण, 1989 प्रकाशकः भारतीय भवन, ठाकुरवाडी रोड, पटना–800 003.

उत्तर भारत में इसकी व्यापकता थी और इसके अवशेष गंगा की घाटी में यत्र–तत्र मिलने लगे है। प्रागैतिहासिक काल की सभ्यता के अवशेष कोल्हापूर, महाराष्ट्र, बडौदा, नेवेसा अदि स्थानों से मिले है और पुरातत्वीय सामग्री के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सिंधुघाटी–सभ्यता एक व्यापक सभ्यता की श्रृंखला थी।इनकी लिपि के पढे जाने के बाद इसपर और भी प्रकाश पडेगा। यह सर्वतोमुखी सभ्यता अपनी समकालीन नागरिक सभ्यताओं सें कई क्षेत्रों में बढ–चढी थी। अत्याधिक उत्खनन से यह सिध्द हो चुका है कि हडप्पा–संस्कृति सिंधुघाटी तक ही सीमित न रहकर पूर्व में आलमगीरपूर (मेरठ), उत्तर में रूपड (अम्बाला), दक्षिण में मालवन (सूरत), उत्तर–पश्चिम राजस्था का घग्घर क्षेत्र (प्राचीन सरस्वती), समस्त सौराष्ट्र, उत्तरी गुजरात और कच्छ में सूरकोटडा तक फेली हुई थी। ऐसा अनुमान लगाया जाता है किइस संस्कृति का क्षेत्रफल लगभग 2,10,550 किलोमीटर था। अभी हाल में कच्छ से प्राप्त उपकरणों से यह स्पष्ट है कि हडप्पा–संस्कृति के लोगो ने सलिमार्ग से ही सिंध से कच्छ में प्रवेश किया। सूरकोटडा–उत्खनन के फलस्वरूप एक हडप्पायुगीन प्राकार–परिवेष्ठित गढी और उसके साथ जुडी बस्ती का अनावरण हुआ। इस सभ्यता के नगरों का निर्माण–प्रणाली मिस्त्र तथा बेबिलोन से उच्चतर थी।

हडप्पा सभ्यता का काल– हडप्पा सभ्यता के कालानुक्रम में प्रश्न पर विद्वानों में भारी मतभेद है। बुली हॉल, गार्डन चाइल्ड, बेक आदि विद्वान् विश्व की नदी–घाटी सभ्यताओं में हडप्पा अथवा सिन्धु सभ्यता को सबसे प्राचीन एवं प्रारम्भिक मानते है। प्रमुख अॅग्रेज पुरातत्वज्ञ सर जॉन मार्शन ने सिन्धुघाटी सभ्यता का काल 3250–2750 ई.पू. निर्धारित किया था। डॉ. राधाकुमुद मुकर्जी का मत है कि इस सभ्यता का प्रारम्भ 3250 ई. पू. से भी बहुत पहले हुआ होगा। के. एन. शास्त्री और डॉ. राजबली पाण्डेय इसे ईसा पूर्व चार हजार वर्ष पुरानी सभ्यता मानते हैं। डॉ. पाण्डेय का मतह है कि, ''यहाँ की खुदाई में जल में धरातल तक प्राचीन नगरों के खण्डहरों के एक के उुपर दूसरे सात स्तर मिले है।

1.“The Indus Valley civilization covered an enormous area most of what is now west Pakistan including sindh and a large part of Baluchistan, the Punjab,north as far as the Himalayan foot-hills, and the northesast to Alamagirpur-the culture was so uniform as to suggest a unified empire, the largest before Roamn times, and at least twice the size of the old kingdom of Egypt..”

2.इन दोनों स्थानों का उत्खनन भी श्री वाई. डी. शर्मा के निदेशन में हुआ है।
देखिए– GEORGE F. DALES-'The Decline of the Harappans' (American Review, October, 1966)-
"....embraced an area more extensive that either Egypt or Mesopotamia........Harappan State the Himalayas ......to reached westward to the bordrs of Iran....touched the foothills of stretched southward along the west coast of India as far Gulf of Cambay to the north of Bombay,the Harappan sites along the coast ot india also shows that many of these southenly towns and trading ports had continued to be occupied much later that the site in Indus valley.....more that eightly, Harappan sites in Gujarat area.......the seaport at Lothal contains the structure.
3.–उत्तरप्रदेश के श्रृंगवेरपुर नामक स्थान को रामायणाकालीन माना जाता है।
–मोरेना जिले में पहाडपूर के पेटिंग भी पुरातात्विक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है।
"A new evidence indicating cultural and historical between India and the U S S R at the second millennium B.C.has been found in the deserts of Chuli moun tains in the Soviet Union. The theme of the rock murals correspond to those of ancient India myth...The mural were painted about second half of the econd millennium B.C.

मोटे तौर पर यदि एक नगर का अवशेष है, जिसके पूर्व सभ्यता विकसित हो चुकी थी और यदि भूगर्भ का पानी बीच में बाधा न डालता तो सातवें स्तर पके नीचे भी खण्डहरों के स्तर मिल सकते हैं। इस प्रकार, सिन्धु सभ्यता कम–से–कम ईसा पूर्व चार हजार वर्ष की है। ''बलूचिस्तान और मकरान में मिली पुरातात्विक वस्तुओं के आधार पर भी यह माना जाता है कि हडप्पा सभ्यता का प्रारम्भ ई. पू. चार हजार वर्ष पूर्व क्वेटा, अमरी, नल, कुल्ली, झोब आदि स्थानों पर ग्राम्य बस्तियों के रूप में हो गया था। डॉ. राधाकृष्णन की मान्यता है कि यह सभ्यता 3500 ई. पू. 2250 ई.पू. के मध्य अपनी चरम सीमा पर थी। परन्तु सर मोरटीमर व्हीलर इस सभ्यता को 2500 ई.पू. से 1500 ई.पू. के मध्य की मानते है डॉ. फेकफर्ट ने इसका काल 2800 ई. पू. का माना है, तो डॉ. फबरी ने इसका समय 2800–2500 ई.पू. माना है। नवीनतम खोजों के आधार पर डॉ. मेके ने भी डॉ. फबरी के मत की पुष्टि की है। पुरानी वस्तुओं के काल को जानने की विज्ञानसम्मत

''कार्बन– 14 परीक्षण प्रणाली'' के अनुसार सिन्धु सभ्यता का विकास काल 2400 ई.पूत्र से 1750 ई.पू. माना गया है वस्तुतः हडप्पा सभ्यता का काल एक विवादास्पद प्रश्न है, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि 3000 ई.पू. में भारतभूमि पर स्वतन्त्र एवं समृध्द सभ्यता विकसित हो चुकी थी और यह सभ्यता मिस्त्र एवं सुमेर सभ्यताओं से किसी प्रकार भी कम उन्त्त न थी। डॉ. फेंकफर्ट ने सत्य ही लिखा है कि, ''यह बिना किसी सन्देह के निर्धारित हो चुका है कि भारत ने एक ऐसी संस्कृति के निर्माण में अपनी भूमिका आ की जिसने यूनानियों के पहले इस विश्व को सभ्य बनाया।''

सिंधु सभ्यता का मूल और समय– इस सभ्यता के संबंध में अभी कुठ कहना कठिन है। इसके मूल में अब भी प्रश्नसूचे चिहन लगे हुए है। कुछ लोग तो इसे भारत की अति प्राचीन सभ्यता मानते है और कुछ लोगों का विश्वास है कि इलाम, मेसोपोटामिया तथा अन्य पिश्चिमी एशियाई सभ्यताओं के संपर्क से इसका विकास हुआ।इसलिए इस संबध में अभी किसी प्रकार का मत प्रकट करना असभंव है । यदि नवीन प्रस्तरयुग को भी प्रागैतिहासिक इतिहास की कोटि में रख लिया जाए तो इसका प्रसार पूरे बिहार, बंगाल और असम तक माना जा सकता है; क्योंकि इन सारे प्रदेशों में जो भी उत्खनन हुए है , वहॉ से नियोलिथक कल्वर के बहुत अवशेष मिले है। बिहार में छपरा जिला का चिराण्ड वैसा ही एक केंद्र है। कुछ लोगों का विचार है कि ये लोग 'द्रविड' थे और हॉल महोदय के अनुसार द्रविडों ने ही सूमेरी सभ्यता का निर्माण किया था। कुछ लोग हडप्पावासियों को 'फीनिशियन' मानते है। सुमेरिया, मेसोपोटामिया तथा सिंधुघाटी में काफी समानता थी। इन सभ्यताओं में विकसित नगर–जीवन, चाक द्वारा बनाए हुए, तॉबें और कॉसे के बरतनों का उपयोग , भठ्ठी में पकी हुई ईटो का इस्तेमाल तथा चित्रमय लिपि का व्यवहार समान रूप से था। इन देशों में व्यापारिक संबंध थी। इतना ही निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि सैंधव सभ्यता वेद् से पूर्व की सभ्यता थी और वैदिक आर्य सैंधव के निर्माता नहीं थे। विभिन्न सभ्यताओं के साथ सिंधुघाटी सभ्यता का संपर्क अवश्य था। जहॉ तक इस सभ्यता के काल का प्रश्न है , इस संबंध में मोहनजोदडो के सप्तस्तरीय भग्नावशेषों के अध्ययन से इसका कालप्रसार 3250 और 1750 ई.पू. के बीच माना जाता है। इन सात स्तरों मे तीन युग पश्चात्कालीन है, तीन मध्यकालीन और एक प्राचीन है। सभ्यता के संभवतः अन्य प्राचीनतम स्तर भी रहे होंगे। यह सर्वथा मान्य है कि इस सभ्यता का आरंभ अधिक प्राचीन रहा होगा; क्योंकि मोहनजोदडो का जटिल और समन्वित नागरिक जीवन निस्संदेह शताब्दियों के विकास का परिणाम था। यों इन क्षेत्रों से उपलब्ध सामग्री तो 5500 ई.पू. तक की है।

सिंधुघाटी की सभ्यता का तिथि–निर्धारण एक कठिन समस्या है, क्योंकि न तो हमें ठी से ऋग्वेद अथवा वैदिक सभ्यता को 4500.ई. पू. तक ले जाते है और वे लोग सिंधुघाटी सभ्यता के निर्माता के रूप में भी आर्यो को ही मानते है, किंतु उपलब्ध तथ्यों के आधार पर ऐसा मानना संभव नही है। सिंधुघाटीवाले नगरों में रहते थें और आर्य ऋग्वेदकाल में ग्रामवासी थे। आर्य लोग इनके उपयोग से परिचित थे। सिंधुघाटी में कवच और शिरस्त्राण का उपयोग नहीं होता था, परंतु आर्य इनके उपयोग से परिचित थे।सिंधुघाटी में वृषभ का महत्व था और आर्यो के यहॉ घोडे का। सिंधुघाटी कें लोग मूर्तिपूजक थे तथा उन्हें लिपि का ज्ञान था, जबकि आर्य इन दोनों से अपरिचित थे। ऐसी स्थिति में आर्यो को इस सभ्यता का निर्माणकर्ता कहना असंभव है–ये आर्यो से पूर्व ही भारत में,रहे थे तथा इनकी सभ्यता आर्यो से पुरानी थी। जब तक वहॉ की लिपि पढी नहीं जाती, तब तक इसी तथ्य को ध्यान में रखकर इसके तिथि–निर्धारण पर विचार करना होगा।इसके तिथि–निर्धारण के कम में पश्चिमी देशों के साथ इसके संपर्क पर भी

ध्यान रखना होगा; क्योंकि हम जानते हैं कि सिंधुघाटी शैली पर आधृत 30 उपर मुहरें हमें उर, किश, अश्मर, सुसा तथा अन्य स्थानों से मिली है।

ये लोग किलाबंदी से भी परिचित थे और किलो से घिरे रहते थे। इन्हें आर्यो के साथ भीषण संघर्ष भी करना पडा था और इन्द्र ने इन्हीं लोगों के किलों को नेस्तनाबूद करके 'पुरंदर' की उपाधि प्राप्त की थी। अत; हम यह मान सकते है कि इंद्र द्वारा पराजित होने के बाद ही इस सभ्यता का अंत हुआ होगा और तदनुसार इस सभ्यता का अंतिम समय इलाम 1750–1500 ई.पू. तक माना जा सकता है। वूली महोदय को मेसोपोटिया के उत्खनन के समय इलाम और मेसोपोटामिया में वृषभंकित सिंधुघाटी–शैली की दो मुहरें मिली और उनमें उस प्रकार एक दृष्टांत मिला। इन तथ्यों के आधार पर उन्होंने इसका समय 2800 ई.पू. निर्धारित किया। मार्शल महोदय इसका समय 3000 ई.पू. मानते है। फेयरसर्विस ने हडप्पा–संस्कृति को तीन भागों में बॉटा है– प्रारंभिक काल, जिसका पता अभी पूर्ण रूप से नहीं लग सका है (उत्खनन के द्वारा); हडप्पा–संस्कृति का विकास–काल, जिसका प्रमाण हमें मोहनजोदडो और हडप्पा से मिलता है और अवनति–काल, जिसे वे 800 ई.पू. पर रखते है। उनका कहना है कि रेडियो कार्बन–14 तिथि–निर्धारण की प्रकिया के अनुसार क्वेटा के समीप सिंधुघाटी–सभ्यता का समय 3500 से 3100 ई.पू. तक फली और उसके बाद उसका ह्रास शुरू हुआ। ह्रान्जी के अनुसार इस सभ्यता का उत्कर्षकाल 2400–2100 ई.पू. माना जा सकता है। ह्वीलर महोदय इसके उत्कर्ष–काल का समय 2500–1500 ई.पू.मानते है। फाबरी के अनुसार इसका समय 2800–2500 ई.पू. होना चाहिए।आलचीन महोदय इसे 2150–1750 ई.पू. के बीच रखते है। जी. एफ.डेल्स के अनुसार इसका समय 2154 से 1864 ई.पू. होना चाहिए। ए. घोष के अनुसार 2500–1700 ई.पूकृपी. अग्रवाल के अनुसार 2300–1700 ई.पू. और सी. जे. गाड्ड के अनुसार 2350–1700 ई.पू. होना चाहिए। अलब्राइट ने इसे 1750 ई.पू. के आसपास रखा है। इन सभी तथ्योंपर विचार करने से ऐसा लगता है कि सिंधुघाटी–सभ्यता का विकास 3500 ई.पू. के आसपास हुआ होगा और 1000 ई.पू. में जब लोहे का प्रयोग पूर्ण मात्रा में होने लगा होगा, तब सिंधुघाटी के बचे–खुचे अवशेष भी समाप्त हो गए होंगे।

(4) अपनी प्रसिध्द पुस्तक The Roots of Indian Culture में।

इसका फॅलाव इतने दिनों तक जो बना रहा, उसका सबसे भूल कारण यह है कि ये लोग यहॉ के आदि–निवासी थे और जब तक ये लोग विरोध कर सके, तब तक अपने दुश्मनों का विरोध करते रहे। लोहे के सामने कॉसे का रहना मुश्किल है, अतः 800 ई.पू. के आसपास ये समाप्त हो गए।

हडप्पा सभ्यता के निर्माता– हडप्पा सभ्यता के निर्माता कौन थे, यह विषय अद्यावधि विवादास्पद बना हुआ है ओर जब तक इस सम्बन्ध में निश्चिम प्रमाण नहीं मिलते, मतभेद बना रहेगा। इस सम्बन्ध में विद्वानों की तीन मानयताऍं प्रचलित है। एक मान्यता के अनुसार ये लोग मिश्रित जाति के थे। दूसरी मान्यता के अनुसार वे लोग द्रविड थे और तीसरी के अनुसार वे लोग आर्य थे।

पहली मान्यता के समर्थक कर्नल स्युअल और डॉ. गुहा का कहना है कि हडप्पा सभ्यता का निर्माण किसी उक नस्ल अथवा जाति के लोगों ने नहीं किया। हडप्पा सभ्यता नागरीय सभ्यता थी। इसके मुख्य नगर व्यापार– वाणिज्य के प्रमुख केन्द्र बने हुये थे। अतः आजीविका की तलाश में अनेक प्रजातियों के लोग यहॉ आकर बस गये थे। हडप्पा सभ्यता के विभिन्ना पुरातात्विक स्थलों की खुदाई में प्राप्त नर–कंकालो की शारीरिक बनावट के विश्लेषण के आधार पर मानवशास्त्र वेत्ताओं ने हडप्पा सभ्यता का विकास करने वाले लोगों का चार नस्लों– आदिम आग्नेय (प्रोटो–आस्ट्रेलायड) , मंगोलियन (मंगोलायड), भूमध्य–सागरीय और अल्पाइन–से सम्बन्धित बतलाया है। इनमें से मंगोलियन तथा अल्पाइन नस्ल के लोगों की केवल एक–एक खोपडी मिली है। दूसरी मान्यता के विद्वानों का कहना है कि चूॅकि खुदाई में प्राप्त नर–कंकालों में भूमध्यसागरीय नस्ल की प्रधानता है, अतः इस सभ्यता के निर्माण का श्रेय द्रविड को था। द्रविड लोग भूमध्यसागरीय नस्ल की ही एक शाखा थे। सर जॉन मार्शल इस कत के प्रबल समर्थक हैं इस मत की मान्यता में मुख्य कठिनाई शव–संस्कार की है जो द्रविडों में पूर्ण समाधि के रूप में सम्पन्न होता था। दूसरी बात यह कि दक्षिण भारत में हुये उत्खनन में अद्यावधि सैन्धव सभ्यता (हडप्पा सभ्यता) का लेशमात्र भी प्रभाव नहीं दीख पडता है। कुछ विद्वान बलूचिस्तान आदि भागों में बोली जाने वाली ''ब्राहुई भाषा'' तथा द्रविडों की भाषा में समानता के कारण भी द्रविडों को इस सभ्यता का निर्माता मानते है। ब्राहुई जाति द्रविड जाति से भिन्ना तुर्की – ईरानी जाति से सम्बन्धित है और इस बात का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं कि ''हडप्पा संस्कृति'' के निर्माण में इस जाति का हाथ रहा हो। प्रोफेसर चाइल्ड ने सुमेरियन लोगों को इस सभ्यता का निर्माता माना है। डॉ. हाल ने भी उनक`मत की पृष्टि की है, साथ ही वे द्रविडों को सुमोरियन जाति का अंग भी मानते है। सुमेरियन लोगों का सिन्ध प्रदेश से व्यापारिक सम्बन्ध अवश्य गहरा था और मोहनजोदडो में उनकी पर्याप्त संख्या भी रही होगी, परन्तु ऐसा कोई आधार नहीं जिससे वे सैन्धव संस्कृति के जन्मदाता कहे जा सकें। श्री पिगट के अनुसार इस सभ्यता का उद्गम पूर्णतया भारतीय था, परन्तु वे इस पर सुमेरियन प्रभाव को भी स्वीकार करते है। तीसरी मान्याता के विद्वानों–लक्ष्मण स्वरूप, रामचन्द्रन, शंकरानन्द्र, दीक्षितार तथा पुसालकर– के अनुसार इस सभ्यता के निर्माता आर्य थे अथवा आर्यो ने भी इसके विकास में महत्वपूर्ण योगदान अवश्य दिया होगा। डॉ. पुसालकर के शब्दों में, ''यह आर्य और अनार्य सभ्यताओं के मिश्रण का प्रतिनिधित्व करते है। अधिक–से –आधिक हम यह कह सकते हैं क सम्भवतया उस समय में ऋग्वैदिक आर्य वहॉ की जनता का एक महत्वपूर्ण भाग थे और उन्होंने भी सिन्धुघाटी की सभ्यता के विकास में अपना योग दिया।'' दूसरी तरफ सर जॉन मार्शल ने वैदिक सभ्यता की सैनधव सभ्यता से तुलना करते हुये दोंनो को एक–दूसरे से सर्वथा भिन्न माना है।

उनके विचार से जब आर्य–जाति भारत में आई, उससे एक हजार वर्ष पूर्व ही सैन्धव सभ्यता समाप्त हो चुकी थी। यदि हम यह मान लें कि वैदिक संस्कृति , हडप्पा संस्कृति की पूर्वगामिनी एवं जननी है, तो यह मत यहॉ तक तो युक्तिसंगत है कि

ग्रामीण वैदिक संस्कृति से ही क्रमशः सिन्धु प्रदेश की शहरी संस्कृति का विकास हुआ होगा। परन्तु उसके बाद यह विचारणीय होगी कि संस्कृति सम्बन्धी जिस प्रकार की सामग्री का उल्लेख ऋग्वेद में हुआ है, वह आगे हडप्पा संस्कृति में क्यों नहीं मिलती? उदाहरणार्थ यदि वैदिक संस्कृति पूर्वगामिनी है, तो वेदों में उल्लिखित कवच आदि रक्षात्मक वस्तुओं का हडप्पा सभ्यता में अभाव क्यों है; सिन्धु सभ्यता में लोहे का प्रयोग क्यों नहीं मिलता, वैदिक साहित्य के महत्वपूर्ण पशु अश्व का हडप्पा एवं मोहनजोदडो जैसे प्रमुख नगरों में निश्चित एवं पर्याप्त साक्ष्य क्यों नहीं मिलते तथा गाय के स्थान पर बैल का धार्मिक महत्व कैसे हो गया? वस्तुतः हडप्पा सभ्यता के कुछ स्थलों पर नव–पाषाणकालीन उपकरणों की प्राप्ति इस बात की सूचक है कि वह सभ्यता की पूर्वगामिनी है, न कि वैदिक सभ्यता।

वस्तुतः जब तक सिन्धु सभ्यता के स्थलों की खुदाई में प्राप्त मोहरों पर अंकित लिपि की भली प्रकार पढ नहीं लिया जाता तब तक यह कहना कठिन होगा कि इस सभ्यता को जन्म देने और विकसित करने वाले लोग किस जाति के थे।

नगर योजना, नगर निर्माण– बडे नगरों का अस्तित्व और नगर–योजना तथा स्थापत्य की सुस्पष्ट पध्दति हडप्पा सभ्यता द्वारा प्राप्त विकास के उच्च स्तर के परिचायक है। पुरातत्वज्ञों ने इस सभ्यता के कई बडे नगर खोजे है, जिनमें हडप्पा , मोहनजोदडो, कालीबंगा और लोथल मुख्य है। ये सभी नगर नदियों के किनारें बसे थे। उस काल में वर्षपर्यन्त पर्याप्त जलपूरित नदियॉ, जहॉ एक और व्यापार का मुख्य माध्यम थी, की सम्भावना भी निरन्तर बनी रहती थी; क्योंकि उन नदियों में समय–समय पर आनेवाली बाढ तटवर्ती नगरों की क्षतिग्रस्त या उनका विनाश भी करती थी। हडप्पा सभ्यता के प्रमुख केंन्द्रों में जो खुदाई हुई है उससे ज्ञात होता है कि इन नगरों की रचना एक निश्चित योजना के अनुसार की गई थी। इन नगरों के स्थापत्य शिल्प और उनकी आधार योजना में समानता व उच्चकोटि की व्यवस्था देखकर यही लगता है कि सिन्धुवासी अपने नगरों का निर्माण पहले योजना बनाकर करते थे और योजना बनाने वाले तथा रचना करने वाले इंजीनीयर लोग नगर–रचनाशास्त्र के अनुभवी ज्ञाता रहे होगे। अनेंस्ट मैके ने मोहनजोदडो के अवशेषों का निरीक्षण करने के बाद कहा था, ''इस उजडे नगर के ध्वंसावशेषों में प्रवेश करते समय निरिक्षक को ऐसा प्रतीत होता कि वह लंकांशायर के किसी आधुनिक व्यापारी नगर के ध्वंसावशेषो से घिरा हो।''

(5) '' It planned its town with their chessboard system] ird system] streets] driange pipe and cesspits. such town-planning is not to be found in the cities of western Asia.No other people in antiquity had build sucl:and excellent drainage system except perphaps those of crete in Lnossos-they producetd their own pottery and seals and nor did the people of Western Asia show such skills in the use of burnt briks as the Harappans did. They invented their own typical script. No contemporary culture spreas over suchy a side area as Harappan culture did. The structures (of Harappa) are the larger of their types in the Bronze Age. No urban complex of Harappan magnitude has beeb discovered so far.

गर्डन चाइल्ड ने अपनी पुस्तक New Light on the Most Ancient – में लिखा है– East " well- planned streets and a magnificent system of drains, regulary cleared out, reflects the vigilance of some regular municipal government. Its authority was strong enough to secure the observance of town-planning bye-law and the maintenance of the approved lines of streets and lanes over rendered necessary b y floods. '' इस पुस्तक का हिंदी अनुवाद लेखक ने किया है, जो ग्रंथ अकादमी, पटना से प्रकाशित हुई है

इन नदियों से नगर की सुरक्षा करने के लिए बॉधो का निर्माण भी किया जा सकता था। परन्तु अन्ततोगत्वा नदियॉ ही नगरों के विनाश का कारण बनी प्रतीत होती है। मोहनजोदडो आज सिन्धु नदी से 5–6 किलोमीटर की दूरी पर है, जबकि किसी समय यह उसके तट पर स्थित था। विद्वानों के मतानुसार इस नगर में कम–से–कम दो बार बाढ आई थी। विनाश के बाद पुराने भग्नावशेषों पर ही यह नगर पुनः बसाया गया था। इसी प्रकार, किसी समय हडप्पा नगर रावी के तट पर स्थित था, परन्तु आज वह उससे 9–10 मिलोमीटर की ओर बसा हुआ है। चन्हुदडो को भी बाढ के प्रकोप का सामना करना पडा। यहॉ की खुदाई से जो मिट्टी के बर्तन मिले है, उनमें बालू के अंश विद्यमान है।

नगर बसाने की योजना और भवन–निर्माण–कला सिंधुसभ्यता की उत्कृष्ट विशेषता थी। पेनसिलवेनिया विश्वविद्यालय की ओर से 19654–65 में जो उत्खनन–कार्य हुए, उसके आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि ई.पू. 2000 के आसपास मोहनजोदडो नगर में एक वर्गमील के औसतन चालीस हजार निवासी रहते थे। इस समय तक इस नगर का महत्व बना हुआ था। उस खास अंश के भग्नावशेष अब भी वहॉ दो भागों में विभक्त पडे हुए है। वहॉ के निवासी नगर–निर्माण–प्रणाली से पूर्णतः परिचित थे और वहॉ की नगर–निर्माण–प्रणाली विशद थी। श्री दीक्षित के अनुसार ऐसी उत्तम प्रणाली संसार के अन्य किसी प्राचीन देश में देखने को नहीं मिलती। वहॉ की इमारतों में पकी हुई ईटों का व्यवहार होता था। ऐसा प्रतीत होता है कि शहर एक निश्चित योजना के आधार पर बसाया गया था। मोहनजोदडो और हडप्पा में अद्भूत समता है। नगरों की रक्षा के लिए चारों से दीवारों का प्रबंध था हडप्पा में नगर–रक्षा की प्रधान दीवारं कच्ची ईटों की बनी थी। मकान प्रायः दो खंड के होते थे। इन मकानों की छत पर सममतल फर्श होता था। मोहनजोदडो के भवनों में आम सडको की ओर कम दरवाजे की योजना पाए गए है। उपर खंडों में जाने के लिए सीढियॉ बनी होती थी। ये सीढियॉ बहुत कम चौडी है। बडे मकानों की योजना में कोई विशेष अंतर नहीं थी । मिट्टी और चूने के प्लास्टर का व्यवहार होता था। एक ही योजना निर्माण का आधार थी। बडे–बडे मकानों में अतिथिगृह और विश्रामागार का भी प्रबंध

था। प्रत्येक मकाने में द्वारपाल के रहने की व्यवस्था थी। चूल्हे मकान के बाहर बनते थे। कुएँ भी बनते थे। मोहनजोदडो की अपेक्षा हडप्पा में कम कुएँ मिले है।कई घरों में निजी स्नानगृह थे। नालियों का इतना सुंदर प्रबंध था कि अन्य प्राचीन देशों में ऐसा कहीं नहीं मिलता है।प्रत्येक सडक तथा गली में नालियॉं बनी थी। नालियॉं दो इंच से अठाराह इंच तक गहरी है। सडकों पर नालियॉं बनी हुई थी और प्रत्येक घर की नाली वहॉं जाकर गिरती थी। बीच–बीच में पानी रोकने के लिए छोटे–छोटे गढे भी थे, जिनमें गंदगी जमने पर निकाल दी जाती थी। क्रीट की रजाधान 'नौसस' को छोडकर पानी निकालने का ऐसा प्रबंध शायद और कहीं नहीं था। स्वास्थ्य एवं सफाई पर विशेष ध्यान दिया जाता था। मोहनजोदडो में एक विशालस्नानागर भी मिला है। इसमें बडे सुंदर ढंग से ईटो का काम किया हुआ है। नीचे जाने के लिए सीढियॉं बनी है। इसके पाश्वों में कपडा बदलने की कोठरियॉं बनी हुई है। शरीर का मैल साफ करने के लिए झॉवे के टुकडे भी मिले है। स्नानगार में पानी लाने और निकालने का भी रास्ता था। सबसे बडी सडक 33 फुट चौडी थी।

---

(6) (i) ए. एल. वासम लिखते हैं – “The unique sewerage system….is one of their most impressive achievement No other ancient civilization until that of the Romans had so efficient a system of drains”

(ii) आम स्नानागार के संबध में कार्लटन का कथन है–”A swimming bath on a scale which do credit to a modern sea-side hotel.”

संभवतः यह राजमार्ग था; क्योंकि समस्त सडके इस सडक से मिलती थी। सडत्रके उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम की ओर जाती थी। चौराहे की तुलना 'ऑक्सफोर्ड सरकस' से क गई है। शहर का आकार समकोण चतुर्भुज था। सडकें एक–दूसरे से समकोण चतुर्भुज था। सडकें एक–दूसरे से समकोण पर मिलती थी। गलियों 3 फुट से 7 फुट तक चौडी होती थी। पर, उचित स्थानों पर कूडेखाने बने हुए थे। नगर –योजना की आधार–पीठिका थी, नगर की प्रमुख सडके। प्रत्येक नगर सडको द्वारा कई खंडो मे विभक्त था। ये ही खंड मुहल्लों के रूप में हो जाते थे। इन खंडो में एक निश्चित योजना के आधार पर भवनों का निर्माण होता था। हडप्पा की सडकों के संबध में हमें कोई ज्ञान प्राप्त नहीं हो सका है; परंतु मोहनजोदडो की सडकों की स्थिति का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। सडकों की सफाई पर ध्यान रखा जाता था। मोहनजोदडो की दो सडको के संगम पर एक भोजनालय का ध्वंसावशेष मिला है। नालियों को साफ करने की व्यवस्था भी थी। सडकों और नालियों की ऐसी सुव्यवस्था 18 वी शताब्दी तक पेरिस और लंदन में भी नहीं थी।

हडप्पा की अपेक्षा मोहनजोदडो के भवन अधिक विशाल थे और वहॉं ध्वंसावशेष भी अधिक सुरक्षित है। ध्वंजावशेषों के आधार पर यह अनुमान लगया जाता है कि प्रारंभ में सुसंगठित शासन–व्यवस्था थी और लोग नियम का पालन ज्यादा करते थे। बादमें लोग निम के पाबंद नहीं रह गए थे। भवननिर्माण–कला के आधार पर हम वहॉं की वास्तुकला का सही मूल्यांकन कर सकते है। जिस समय मिस्त्रिनिवासी पक्की ईटों के प्रयोग से अनभिज्ञ थे और मेसोपोटामिया में यह प्रयोग अत्यल्प मात्रा में होता था, उसी समय सिधुंघाटी के लोग कच्ची और पक्की ईटों का प्रयोग बडी कुशलता से करते थे बाढ से रक्षा के लिए कभी–कभी मकान उुंचे–उुंचे चबूतरों पर बनाए जाते थे। दुमंजिले मकानों की नीवं अधिक गहरी होती थी और उनकी नीचे की मंजिल की दीवारें अधिक चौडी थी। दीवारों पर प्लास्टर करने की भी प्रथा थी। छतों के उुपर का पानी निकालने के लिए मिट्टी अथवा लकडी के परवाले बने होते थे।प्रत्येक घर में ऑगन, पाकशाला, स्नानागार, शौचागृह और कुँए की व्यवस्था थी। स्नानागारों के फर्श पक्की ईटों से पोटे होते थे। दूसरी मंजिल पर भी कहीं–कहीं शौचगृह मिले है। छोटे–बडे सभी प्रकार के भवनों के ध्वंसावशेष मिले है। सिंधुघाटी में दो प्रकार के मकान थे– धनिकों के और मजदूरों के। घरों के जो अवशेष मिले है, उनसे यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि मकान निश्चित नमूने के आधार पर बनते थे। मकान छोटे, बडे और मॅझले–तीन प्रकार के होते थे। मोहनजोदडो में एक ऐसा मुहल्ला भी मिला है, जिसके लिए पानी जुटाने का प्रबंध भी अलग था। एक किनारे पर 16 मकानों के अवशेष मिले है। आठ–आठ मकान दो समांतर पंक्तियों में है। हडप्पा में किले के उत्तर नीचं की ओर मजदूरों का एक मुहल्ला बसा था। वहॉं भी चौदह ऐसे मकान मिले है, जो सात–सात की दो पक्तियों में बने है। यह मुहल्ला संभवतःमजदूरों का था। डॉ ह्वीलर का मत है कि इन इलाकों में ऐसे मजदूर रहते थे, जो शायद गुलामों कें रूप खटते थे।

भव्य इमारतों का भी अभाव नहीं था। ये इमारतें संभवतः सार्वजनिक और राजकीय थीं। हडप्पा में ऐसी इमारतें थी और मोहनजोडो में भी। हडप्पा में भांडागार मिले है, जिनका प्रमुख प्रवेश–द्वारा नदी की ओर है और ऐसा प्रतीत होता है कि नदी–मार्गो से ही भांडागारों की सामग्री आती–जाती होगी। भांडागार मेसोपोटामिया में भी मिले है। मोहनजोदडो में भी एक भव्य इमारत होने का प्रमाण मिलता है।

---

(7) Pre-histroic backround of India culture esa D.H. Gordon का कहना है कि सिंधुघाटी–सभ्यता में गुलाबी की व्यवस्था थी। उन्होंने 75 मृण्मूर्तियों के आधार पर अपना यह निर्णय दिया है। स्वर्गीय प्रॉ.डी.डी. कौसाम्बी इस मत से सहमत नहीं है। देखिए– culture and civilization of Ancient India ।देखिए–गौहाटी

संभव है, इस भवन का प्रयोग किसी सार्वजनिक काम के लिए होता रहा हो। इसके दक्षिण ही एक विशाल खंभेवाला वर्गाकार दालान है। कुछ लोगों के मतानुसार दहॉं राजमहल के अवशेष भी पाए गए है। स्नानगार भी अपनी विशालता के लिए प्रसीध्द है। वहॉं किसी भी कतरे में बेपर्दगी की गुंजाइश नहीं थी अनके विद्वानों का मत है कि उुपरी मंजिल पर बने हुए कमरों में

पुजारी रहते थे, जो शुभ मुहर्तो और पर्वो पर नीचे उतरकर नहाते थे। इसी के समीप एक भांडागार के होने का भी प्रमाण मिला है।स्नानागार के उत्तर–पूर्व एक अन्य भवन का अवशेष मिला है। इसे कुछ विद्वान उच्च राज्याधिकारों का निवासीन मानते है। वहॉं एक राजप्रसाद के होने का भी अनुमान लगाया जाता है। मैके इसे राज्यपाल का भवन मानते है। स्नानकुंड के समीप एक सार्वजनिक सामूहिक भवन भी था। दीक्षित महोदय इसे धर्मस्थान मानते है। इन सभी अवशेषों के आधार पर हम यह कह सकते है कि सिंधुघाटी के लोग भवननिर्माण–कला में पूर्णरूपेण दक्ष थे। उनके निवास के मकान बहुत अच्छे ढंग से बने थे। वहॉं भवणनिर्माण–कला में उपयोगिता और स्थायित्व पर विशेष ध्यान दिया जाता था। वहॉं की निर्माण प्रणाली सुविकसित एवं पौढ थी। योजना के दृष्टिकोण से यह सभ्यता अद्वितीय थी। हडप्पा में मजबूत किलेबंदी का भी पता चला है। दीवार कच्ची ईटों की बनी थी और अंदर तथा बाहर से पिटी हुई थी। बाहर से किले की दीवार को पक्की ईटों से मजबूत किया जाता था। दीवार 40 फुट चौडी और 36 फुट उुॅची थी। यह प्रमाणित है कि भवन–निर्माण की कला सिंधुघाटी में चरम उत्कर्ष पर पहुॅंच चुकी थी।

किला व दुर्ग–अब तक किये गये उत्खननों से अनुमान लगाया जाता है कि हडप्पा सभ्यता के सभी शहरी केन्द्र समान योजना पर ही आधारित थे। बडे नगरों के दो मुख्य भाग होते थे–दुर्ग या गढी अथवा कोट, जिसमें नगर रक्षक तथा अधिकारी रहा करते थे और तथकथित निचला शहर या बस्ती, जिसमें रिहायशी मकान होते थे। नगर का यह दूसरा हिस्सा सामान्यतः आयताकार बनाया जाता था। दुर्ग का निर्माण शेष नगर से उुपर उठे ईट के उुॅचे चबूतरे पर किया जाता था। यह चबूतरा बाढ के विरूध्द सुरक्षा–कवच का काम भी करता था। नगर के दोनों भागों के सम्पर्क प्रत्यक्षःबहुत सीमित थे। उदाहरणार्थ, कालीबंगा में खुदाई से पता चलता है कि गढी को निचले नगर से केवल दो प्रवेश मार्ग जोडते थे। आवश्यकता पडने पर इन प्रवेश मार्गो को काटा जा सकता था। सूरकोटडा में गढी को एक आरक्षित परकोटो निचले नगर से अलग करता था। हडप्पा में कोट के छोर एक विशेष रास्ता बना हुआ था जिस पर होकर प्रत्यक्षतः सैनिक प्रयाण करते थे अथवा जुलूस जाया करते थे। गढी की मोटी दीवारों और बुर्जो से अच्छी तरह से किलेबन्दी की गयी थी। कालीबंग में उत्खननों से गढी की बाहरी रक्षापोतों का निर्माण करने वाली ईट की एक मोटी दीवार का पता चला है, जिसका भीतर धार्मिक अथवा प्रशासनिक कार्यो से सम्बध्द इमारतें थी। मोहनजोदडो की गढी में एक विशाल स्नानागार मिला है जो सम्भवतः किसी धार्मिक इमारत का अंग था। हडप्पा की गढी के उत्तर में सार्वजनिक अन्नागार मिले है।

सडकें और गलियारें– हडप्पा सभ्यता के योजनबध्द नगर–निर्माण की आधार–पीठिका नगरों की प्रमुख सडके तथा गलियॉं थी। मूलतः समस्त रिहायशी नगर उत्तर से दक्षिण एवं पूर्व से पश्चिम जाने वाले दो रालमार्गो से, जो एक–दूसरे को प्रायः बीच में समकोण पर काटते है, चार समान भागों में विभक्त है। इन दोनों प्रमुख राजमार्गो के मिलाप–स्थल पर चौराहे बने होते थे। नगर की मुख्य सडकें काफी चौड होती थी। मोहनजोदडो में उत्तर से दक्षिण जाने वाला राजमार्ग 33 फीट चौडा और पूर्व से पश्चिम जाने वाला राजमार्ग इससे भी अधिक चौडा है। सडको की इतनी अधिक चौडाई इस बात को सूचित करती है कि इस पर काफी यातायात रहा होगा। इसी प्रकार, अन्य सहायक सडके भी उत्तर से दक्षिण एवं पूर्व से पश्चिम सीधी जाती हुई एवं एक–दूसरे को समकोण पर काटती हुई समस्त नगर को छोटे–छोटे खण्डों में विभाजित करती है। ये नगर–खण्ड भी गलियों या पतली सडकों द्वारा विभिन्न और छोटे–छोटे उपखण्डों में विभक्त है।सहायक सडकें 9 फीट से 18 फीट तक चौडी है। गलियॉं अथवा पतली सडकें अपेक्षाकृत काफी कम चौडी है। प्रत्येक उपखण्ड प्रायः 1200 फीट तक चौडी है। गलियॉं अथवा पतली सडकें अपेक्षाकृत काफी कम चौडी है। प्रत्येक उपखण्ड प्रायः 1200 फीट लम्बा तथा 800 फीट चौडा है जिसे मोहल्ला कहा जा सकता है। अर्नेस्ट मैके के अनुसार इन सडकों का विन्यास कुछ इस प्रकार का है कि हवा उन्हें स्वयं साफ करती रहे।ये सडके मिट्टी के पात्र रखे जाते थे अथवा सडकों के किनारे स्थान–स्थान पर गडढे खोदे जाते थे। हडप्पा की खुदाई में इस प्रकार के गडढे मिले है। स्पष्ट है कि इस प्रकार की जगह–जगह एकत्र कूडा–करकट को नियमित रूप से बाहर फेंकने की व्यवस्था भी रही होगी। इससे पता चलता है कि यहॉं के लोग अपने नगरों की स्वच्छता का विशेष ध्यान रखते थे।

सिन्धुघाटी की भवन निर्माण कला–हडप्पा सभ्यता के प्राचीन स्थलों की खुदाई से उस समय की भवन निर्माण कला के बारे में भी पर्याप्त जानकारी मिलती है। इन नगरों के मकानों की एक विशेषता यह थी कि उनके दरवाजे या खिडकियॉं मुख्य मार्ग की ओर नहीं खुलती थी अपितु गलियों और सहायक सडकों की ओर खुलती थी। खुदाई में सभी प्रकार के भवनों के ध्वंसाशेष मिले है। सबसे छोटे मकान का आकार 30 फीट लम्बा तथा 27 फीट चौडा होता था। उसमें लगभग 4–5 कमरे होते थे। बडे मकानों का आधार छोटे मकानों से लगभग दुगुना होता था ओर उसमें कमरों की संख्या भी अधिक होती थी। हडप्पा की अपेक्षा मोहनजोदडो के मकान अधिक बडे थे ओर उनके ध्वंसाशेष भी अधिक संरक्षित है। इसका एक कारण यह रहा कि हडप्पा के आस–पास के गॉवों के लोग उसके खण्डहरों से ईटे खोदकार ले जाते रहे और जब लाहौर और कराची के बीच रेलवे लाइन बनाने के लिए हडप्पा के ध्वंसावशेषों से ईटें निकाली गई तो यहॉं के ध्वंसावशेषों को भारी क्षति पहुॅंची। यह एक ध्यान देने योग्य बात है कि जिस समय मिस्त्र निवासी पक्की ईटों के प्रयोग से अनभिज्ञ थे और मेसेपोटामिया में यह प्रयोग अल्पत्य मात्रा में होता था, उसी समय सिन्धु निवासी कच्ची और पक्की–दोनों प्रकार की छोटी–बडी ईटें बडी निपुणता से बना रहे थे और उनका व्यापक प्रयोग कर रहे थे कच्ची ईटों को धूप में रखकर सुखाया जाता था और पक्की ईंटें बनाने के लिए उन्हें भट्टों के पकाया जाता था। सभी प्रकार के माप की ईटे मिली है अधिकांश पक्की ईटों का माप 11" × 51 1⁄2 " × 3 3⁄4 '' अथवा 5 1⁄2 " × 2 1⁄2 "2 3⁄4 '' है। कहीं–कहीं पर 20 1⁄4 " × 8 1⁄2 " × 2 1⁄4 '' बडी ईटे भी पाई गई है। सबसे बडी कच्ची ईटें प्रायः 18 " × 7 1⁄2 " × 3 1⁄4 '' की है। ईटों को पकाने के लिये लकडी प्रयुक्त होती थी और सम्भतः शहर के बाहर ईटों को पकाने के भट्टे रहे होंगे। दीवार में

ईटों को जोडने के लिये मिट्टी का गारा काम मे लाया जाता था। धनिक लोग मिट्टी के गारे में चूना भी मिलाते थे। मकानों का निर्माण का नींव डालकर किया जाता था। दो मंजिले मकानों की नींव अधिक गहरी होती थी और ऐसे मकानों की पहली मंजिल की दीवारें भी अधिक गहरी होती थी और ऐसे मकानों की पहली मंजिल के उुपरी मंजिल पर जाने के लिये लकडी और पत्थर से सीढियॉ बनाई जाती थी। जो प्रायः बहुत उुंची और तंग होती थी। अधिकांश मकानों के दरवाले तीन या चार फीट चौडे होते थे। कमरों में दीवारों के साथ आलमारियॉ बनाने की प्रथा भी थी।

मकानो कें दरवाजे तीन या चार फीट चौडे होते थे कमरों में दीवारों के साथ आलमारियॉ बनाने की प्रथा भी थी। मकानों की योजना में कक्षयुक्त खुली सहन का महत्वपूर्ण स्थान था जिसमें ईटे बिछी होती थी और घर के दरवाले एवं खिडकियॉ इसमें ही खुलती थी। सहन (ऑगन) के एक छाये हुये कोने में रसोईघर होता था। नीचे की मंजिल में साधारणतया भण्डार–गृह, कूप–गृह एवं स्नानागार होते थे। वैसे प्रत्येक गली में एक सार्वजनिक कुऑ होता था। परन्तु अधिकांश घरों में निजी कुए होते थे प्रत्येक घर का स्नानागार सडक की ओर होता था। स्नानागरों की फर्श में पक्की ईटों की इस प्रकार जोडाई की जाती थी कि फर्श के भीतर पानी का प्रवेश न हो सके। साथ ही उसे एक कोने की ओर ढालुआ बनाया जाता थ ताकि पानी सरलतापूर्वक नाली में जा सके। मकानों की छतें सपाट और लकडी की बनी होती थी। दीवारों में छेद बनाकर उनमें शहतीरें लगा दी जाती थी और फिर बल्लियॉ डालकर मजबूत चटाई बिछाकर उस पर मिट्टी–गोबर डालकर फर्श को पक्का कर दिया जाता था।

विशाल स्नानागार– मोहनजोदडो की गढी के भीतर एक विशाल स्नान–कुण्ड बना है जो 39 फीट लम्बा, 23 फीट चौडा और 8 फीट गहरा है। इस स्नान–कुण्ड की दीवारें बडी सुदृढ बनी है। दीवार के दोनों ओर बडी सावधानी एवं कुशलतापूर्वक पक्की ईटें लगाई गई है और उनके बीच में कच्ची ईटों का प्रयोग हुआ है। कुण्ड की फर्श में खडी ईटों का प्रयोग इस ढंग से किया गया है कि उनके बीच दरार न रहने पावे। फर्श एवं दीवारों की जुडाई खडिया मिट्टी से की गई है और नमी से बचाव के लिये बाहरी दीवार पर एक इंच मोटा राल का प्लास्टर चढा हुआ है। इस कुण्ड में जाने के लिये दक्षिण और उत्तर की ओर ईटों की सीढियॉ बनी हुई है। उत्तर की सीढियों के समीप एक चबूतरा है। कुण्ड के फर्श का ढलाव दक्षिण–पश्चिम की ओर है और उसी दिशा में पानी निकालने की मोरी भी बनी है। समय–समय पर सफाई के लिये कुण्ड के चारों ओर बरामदे बने हुये थे ओर उनके पीछे छोटे–बडे कमरे निर्मित थे। एक कमरे में एक कुआ मिला है। सम्भवतः इसी कुवे के जल से स्नान–कुण्ड भरा जाता होगा। कुण्ड के उत्तर की ओर एक मार्ग था जिसके दानों ओर कुछ कमरे, जिनमें प्रत्येक की लम्बाई 1) फीट तथा चौटाई 6 फीट थी, बने थे। इन कमरों की दीवारों एवं फर्श पर सावधानी के साथ ईटे चुनी गई थी। इन कमरों में भी छोटी–छोटी नालियॉ बनी थी, जिनके द्वारा कमरे का पानी निकलकर बाहर की बडी नाली में चला जाता था। इन कमरों के दरवाले एक–दूसरे की विपरीत दिशा में खुलते थे। इन स्नानागार की पूरी व्यवस्था उस युग के निवासियों के उच्चस्तरीय जीनव की झलक देते है। कुड विद्वानों का मत है कि यह स्नानागार धार्मिक अवसरों पर पुजारियों अथवा शासक वर्ग के विशेष समारोहपूर्ण स्नान के उपयोग में आता रहा होगा। इस स्नानागार धार्मिक अवसरों पर पुजारियों अथवा शासक वर्ग के विशेष समारोहपूर्ण स्नान के उपयोग में आता रहा होगा। इस स्नानागार के आधार पर हम यह कल्पना कर सकते है कि आधुनिक हिन्दू धर्म की भॉति हडप्पा सभ्यता के धार्मिक जीवन में भी पवित्र स्नान का विशेष महत्व रहा होगा।

गटर की व्यवस्था–हडप्पा सभ्यता के नगरों में दूषित जल को शहर से बार दूर ले जाने की व्यवस्था बहुत ही उत्तम थी। हडप्पा सभ्यता के प्रायः सभी नगरों में नालियॉ (मोरियॉ) का जाल बिछा था। मकानों से आनेवाली नालियॉ तथा परवाले गली की नालियॉ से मिल जाते थे और गली की नालियॉ, सडकों की नालियॉ से मिल जाती थी सहायक सडकों की नालियॉ मुख्य मार्गो की बडी नालियॉ से मिल जाती थी।

मुख्य मार्गो की नालियॉ मेहारबदार पुलियॉ से होती हुई नदी में जा मिलती थी। नालियॉ पक्की होती थी और उनके निर्माण में ईटों, पत्थरों, चूने तथा जिप्सम का प्रयोग किया जाता था। नालियॉ को ईटों तथा पत्थ्रर की पट्टियों से ढॅक दिया जाता था। समय–समय पर नालियॉ को साफ भी किया जाता था। इन नालियॉ में थोडी–थोडी दूरी पर शोषक–कूप (Soak pits) भी बनाये जाते थे ताकि कूडे से पानी का बहाव न रूक सके। नालियॉ की ऐसी उत्तम सफाई व्यवस्था को देखकर बाशम महोदय का विचार है कि अनेक सुनियोजित गलियॉ का विद्यमान होना यह स्पष्ट करता है कि वहॉ किसी नगरीय सरकार की अवश्य ही देख–रेख रही होगी। वस्तुतः दूषित जल–निकास व्यवस्था उनके बुध्दि–कोशल एवं अप्रतिम मानसिक उतीान की परिचायक है।

सिन्धुघाटी की धार्मिक अवस्था–हडप्पा सभ्यता के निवासियों के धार्मिक विश्वासों बारें में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकी अब तक जितने भी उत्खनन कार्य हुये है उनमें ऐसा कोई भी अवशेष नहीं प्राप्त हो सका है जिसके विषय में यह निश्चित रूप से कहा जा सके कि यह देव– स्थान या देव–मूर्ति ही है। फिर भी, खुदाई में प्राप्त मूर्तियों, मुद्राओं (मोहरों) तथा ताबीजों के आधार पर विद्वानों ने उनके धार्मिक विश्वासों की रूपरेखा निश्चित करने का प्रयास किया है, क्योंकि ये वस्तुऍ मानव–समाज में प्रचलित धर्म की अभिव्यक्ति में सदा सहायक रही है। अब तक जितने भी पुरातात्विक साक्ष्य प्राप्त हुये हैं वे निश्चित रूप से इस बात का संकेत करते है कि हडप्पा सभ्यता के निवासियों की धार्मिक परम्परा अति प्राचीन, पौढ एवं पर्याप्त विकसित थी। अब यह स्पष्ट हो गया है कि वे बहुदेववादी थे। वे प्राकृतिक शक्तियों की विभिन्न रूपों मे उपासना करते थे। इस इन बात की सम्भावना है कि वे लोग एक परम सत्ता (सृजनात्मक शक्ति) अथवा ईश्वर में विश्वास रखते थे और उसी परम सत्ता को सृष्टी का निर्माता मानते थे। अपने इसी विश्वास के कारण उन लोंगो में पर पुरूष और पर नारी की पूजा लोकप्रिय हो गई थी।

सिंन्धुघाटी के निवासियों के धार्मिक विश्वास का पूरा स्वरूप हमारे समक्ष नहीं है; क्योंकि इस संबंध में किसी प्रकार का

लिखित साहित्य अथव स्मारक हमें उपलब्ध नहीं है। यहॉ से प्राप्त अवशेषों के आधार पर ही तत्कालीन धार्मिक विश्वासों पर हम कुछ कह सकते हैं मंदिर जैसा कोई भवन नहीं मिला है, फिर भी कुछ विद्वानो ने कुछ भवनों को मंदिर मान लिया है।यह भी अनुमान किया जा सकता है कि मेसोपोटिमिया और सैंधव सभ्यता मे धर्म की बडी समता थी। मोहनजादडो और हडप्पा में प्रकार की मूण्मूतियॉ मिली है, जिन्हें पुरातत्ववेता मातृदेवी की मूतियॉ मानते मानते है। मातृदेवी की पूजा प्राचीनकाल में एजियन और सिंधुप्रांत के बीच सभी देशों में प्रचलित थी। प्रागेतिहसिक युग में मातृपुजा का प्रसार भुमध्यसागर से भारत तक हुआ था। धरती की पूजा से ही मातृपूजा की उत्पति हुई है। सिंधुघाटी में भी इसकी प्रधानता थी और अधिकतर विद्वानों की यही धारणा है कि मूतियॉ माता–प्रकृति की है। एक चित्र में स्त्री के पेट से एक पौधा निकलता दिखाया गया है, जिससे यह ज्ञात होता है कि इसका संबंध पृथ्वी देवी, पौधों की उत्पति और उनके विकास से था। प्रकृतिदेवी का चित्रण हडप्पा से प्राप्त एक मुद्रा पर स्पष्ट है। एक अन्य चित्रमें एक स्त्री पालथी मारकर बैठी हुई है और इसके दोंनों ओर पुजारी है। स्त्री के उुपर पीपल की पत्तियों का चित्रमें एक स्त्री पालथी मारकर बैठी हुई है और इसके दोनों ओर पुजारी है। स्त्री के उुपर पीपल की पत्तियों का चित्रण है। संभवतः इसी से शक्तिपूजा, मातृपूजा और देवी पूजा का प्रचलन हुआ इसका प्रभाव हम अब तक की भारतीय शक्तिपूजा, मातृपूजा, और देवी पूजा का प्रचलन हुआ और इसका प्रभाव हम अब तक की भारतीय उपासना–पध्दति में देखते है। गॉव–गॉव में अलग–अलग देवियॉ भी होती थी। उस समय की मातृदेवी कई रूपों में प्रदशित होती है।

तत्कालीन मातृदेवी को हम वानस्पतिक जगत की देवी भी कह सकते है। मोहनजोदडोंत्र में मातृदेवी की एक मूर्ति मिली है, जिसके शीर्ष पर एक पक्षी पंख फैलए बैठ है। प्रकृति को मातृदेच मानकर विशेष रूप से पूजते रहे हों। शिव की पूजा भी सिंधुघाटी में होती थी और इसका प्रमाण है वहॉ से प्राप्त शिव की त्रिमुखाकृति मूतियॉ। इस तरह के चित्र मुद्राओं और शिव पालथी मारकर पूर्ण योग की अवस्थ में एक तिपाई पर बैठै है। तिपाई के दोनों ओर जानवरों का चित्रण है। वक्ष पर कोई त्रिकोण ढंग का आभूषण–सा है। सर जॉन मार्शल इसे हिंदूकालीन शिव का ही प्राचीन रू मानते है। मैके तो इसे स्पष्ट रूप से शिव ही मानते है। कुछ लोग इसे शिव के पशुपति–रूप की आकृति समझते हैं। वहॉ से प्राप्त अन्य मूतियॉ से शिव के नर्तक रूप से शिव ही कल्पना का आभास मिलता है। कुछ लोगों का विश्वास है कि उपर्युक्त मुद्रा में उुर्ध्वलिंग भी अंकित है। एक अन्य मुद्रा में योगासिन एक व्यक्ति का चित्र मिला है। उसके दोनों और एक–एक नाम तथा सामने दो नाग बैठे है। ऐसा अनुमान लगया जाता है कि योगी का यह चित्र भी शिव का ही है। एक अन्य मुद्रा पर धनुर्धर शिकारी अंकित है, जिससे किरात–वेशधारी शिव का अनुमान होता है। अतःशिव की उपासना सिंधुसभ्यता की ही देन है।

मोहनजोदडों में लिंग के आकार की कई वस्तुएॅ मिली है। बार्थ का कथन है कि किसी काल में देवताओं के प्रतीकों की खोज में अकसात हिंदुओं को यानि और लिंग मिल गए। फूट महोदय को नवीन पाषाणयुग का एक सुन्दर लिंग दक्षिणभारत में मिला था। प्रस्तर–ताम्रयुग में लिंगोपाससना कई देशों में प्रचलित थी। मोहनजोदडो तथा हडप्पा में बडे लिंग तो साधारण चूने के पत्थर के बने है, किंतु छोटे लिंग प्रायःघोंघे के है। बडे लिंग निस्संदेह पूजा के लिए थे। मार्शल के अनुसार बडे लिंग भिन्न–भिन्न संप्रदायों के रहे होंगे । प्राचीन सभ्यताओं में भी लिंगपूजा प्रचलित थी।योनिपूजा भी सिंधूघाटी में प्रचलित थी। शायद प्राचीनतम काल में यह विश्वास था कि स्त्रीलिंग के प्रतीक को धारण करने से बुरे ग्रहों की शांती होती है। अभथा भूत–प्रेतों से भय नहीं रहता। लिंग कें रूप में शिव के प्रतीक भी मिले है। पत्थर की कुछ मूर्तियॉ यासेगमुद्रा में मिली है जिसके यह अनुमान लगाया जाता है कि योगाभ्यास का भी अभ्युदय भी इस काल मे हुआ। एक मूर्ति योगासन का परिचय देती है। लगभग छह मुद्राओं पर अंकित आकृतियॉ योग की कायोंत्सर्ग–दयशा को सूचित करती है। कुछ विद्वानों का विश्वास है कि सैंधव योग–साधना ही पाशुपत योग का आरंभिक रूप था। प्राचीन योगाशास्त्र के अनुसार योग–साधना के लिए आसन,नेत्र, नासिका आदि के जो नियम है, उन नियामों के अनुरूप मोहनजोदडों में एक मूर्ति मिली है। भारत में चिरकाल से वृक्षों में देवी–देवताओं की आत्माओं के अस्तित्व का विश्वास रहा है। कुछ मुद्राओं मे ऐसे दृश्य है, जिनमें वे वृक्ष विष्टनियों से निकल रहे है। हडप्पा में ऐसे अनेक अवशेष मिले है। मोहनजोदडों से प्राप्त एक मुद्रा में एक श्रृगंडी पशु के जुडवॉ सिरों के बीच से नौ पीपल की पतियाऋ निकल रही है। इससे ज्ञात होता है कि पीपल तथा एकश्रृंगडी पशु सिंधुप्रांत में पवित्र समझे जाते थे। पीपल के वृक्ष या पत्तियों का चित्रण अनेक मुद्राओं पर मिला है। पीपल का धार्मिक महत्तव अब भी है। ऋग्वेद से ज्ञात होता है कि जो अश्चत्थ वृक्ष पर जल चढाते हैं उन्हे स्वर्ग प्राप्त होता है। अश्चत्य वृक्ष ही कालांतर में पीपल के नाम से प्रसिध्द हुआ। गीता में श्रीकृष्ण कहते है, मैं सब वृक्षों में पीपल हॅू । पीपल के नीचे ही बुध्द ने परमज्ञान प्राप्त किया था। भारहुत की कला में भी इसकी महत्ता स्पष्ट है।

पीपल के अतिरिक्त कुछ और मुद्राओं पर नीम और बबूल की पत्तियों का भी चित्रण मिलता है। कुछ मुद्राओं पर वृक्षदेवियों के लिए पशुबलि दी जा रही है। एक ऐसा भी दृश्य है, जिससे यह ज्ञात होता है कि बकरे का बलिदान होता होगा। मुद्राओं में कई प्रकार के पशुओं का चित्रण मिलता है। पशुपूजा भी वहॉ प्रचलित थी, इसलिए बहुत–से विद्वानों का ऐसा मत है कि किसी धार्मिक भावना अथवा उद्देश से ही पशु चित्रित किए गए होंगे। मार्शल ने पशुपूजा को तीन भागों में विभक्त किया है–(क) दंती पशुओं की पूजा; (ख) कुछ ऐसे दंती पशु जिनकी उत्पति और जिनका महत्तव विशेष रूप में आने से पहले देवता पशु रूप में ही पूजे जाते थे। कालांतर में जब पशुदेवत्ता मनुष्य–रूप धारण करने लगे तो उनके चिहनस्वरूप केवल सींग रह गए। ये सींग उस समय किसी अद्भूत शक्ति के प्रतीक माने जाते थे।वास्तविक पशुओं की पूजा में भैंस, ऋषभ , बैल , हाथी, गैंडा, बाघ तथा छोटे सींगवाले बैलों का चित्रण है। सबसे प्रचलित पशु कूबड तथा बिना कबूड के बैल थे। इनका चित्रण अनेक मुद्राओं पर मिलता है। एक सुंदर, किंतु विचित्र कबूडदार बैल का भी चित्रण मिला है। शिव–नंदी की कल्पना का सूत्रपात भी यहॉ से हुआ। शिव भारत के सर्वप्राचीन देवता सिंधुघाटी–सभ्यता का । अतः पशुपूजा का खूब प्रचलन था।सभंव है, कुछ जानकर ईश्वर के वाहन के रूप में रहे हो और पशुओं को ईश्वरीय का दूत भी समझा जाता रहा हो। सर्प या नागों का भी धार्मिक महत्व था। पत्थर के टुकडे पर बैठे हुए मनुष्य के दोनों ओर फण ताने हुए सॉप है। बैल तो सर्वप्रसिध्द था ही।इसे शिव का वाहन माना जाता था। उसका सभी प्राचीन सभ्य देशों में धार्मिक महत्व था। इसे शक्ति का प्रतीक समझा जाता था। एक ताबीज पर एक नाग चबूतरे पर लेटा है। मैके के अनुसार

ऐसे चबूतरे पर नागों के पीने के लिए दूध रखा जाता था। शैव–परम्परा और नागों का चह संबध आज भी हिंदू धर्म में विद्यमान है। बतख के चित्रोंवाली मुद्राऍं भी प्राप्त हुई है। अन्य प्राचीन सभ्यताओं में इसकी भी पूजा होती थी। संभवतः इसका भी कुछ धार्मिक महत्व रहा हो। जल का भी धार्मिक महत्व थी, ऐसा अनुमान किया जाता है।

सींग, स्तंभ और स्वस्तिक के भी कई चित्र मिले है। हो सकता है, इनका भी धार्मिक महत्व रहा हो क्योंकी हम जानते है कि वहॉ अंधविश्वास के विविध उपकरण भी मौजूद थे, मुद्राओं, ताबीजों और मूतियों में अंकित नर–नारियॉ अपनी शीर्षो पर सींग धारण किए हुए है। स्वस्तिकों और पाषाण–स्तंभों की पूजा क्रीट में होती थी और ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि यह प्रथा यहॉ भी प्रचलित थी। आज का स्वस्तिक–चिहन उस समय की देन है। मूर्तिपूजा की पध्दति तो थी ही, परंतु मंदिर था कि प्रचलित थी। आज का स्वस्तिक–चिहन उस समय की देन है। मूर्तिपूजा की पध्दति तो थी ही, परंतु मंदिर था कि नहीं, इस समय में कुछ कहना कठिन है। मार्शल का अनुमान है कि वहॉ लकडी के मंदिर होते थे। कुछ नारी–मूतियों के आधार पर मार्शल ने अनुमाना लगाया है कि सब मूतियॉ मंदिर की उपासिकओं की है। नग्न रूप से नृत्य करती हुई नर्तकी मूर्ति को विद्वान देवदासी समझते है। पूजा में धीप–दीप का भी प्रयोग होता था। धार्मिकोत्सवों पर नृत्य एवं गाने–बजाने का भी प्रचलन था। हडप्पा से एक मुद्रा पाप्त हुई, जिस पर एक समारोह का दृश्य है। उसमें मनुष्यो के झुंड के बीच एक मनुष्य ढोल बजा राह है। कहीं–कहीं वीण के भी अंकन मिले है। ये सार अंकन व्यक्तिगत अथवा सामूहिक आमोद–प्रमोद के भी हो सकते है। स्वस्तिक एवं यूनानी क्रुस का भी चित्रण सिंधु–मुद्राओं पर मिलता है। वहॉ से प्राप्त एक मुद्रा में नर्तकी के पैरों से लगता है कि नर्तकी ताल के आधार पर नृत्य कर रही है। देवदासी के चेहरे पर घृणा का भाव स्पष्ट है। जादू–टोने पर भी उनलोगों का विश्वास था। भूत–प्रेतों अथवा वैसी शक्तियों में उनलोगों का विश्वास था और उनमें बचने के लिए ही वे लोग जादू–टोने का व्यवहार करते थे। पशुबलि देवपूजा का एक अंग समझी जाती थी। सिंधूप्रदेश की देवी जानेवाली पशु–बलि में ही हिंदूधर्म में शक्ति–संप्रदाय के बीच अंतर्निहित है।जलपूजा का भी प्रचलन था। विद्वानों का विश्वास है कि स्नानकुंड धार्मिक स्नानों के काम आता था। मृतक–संस्कार के संबंध में भी कुछ निश्चित रूप से कहना असंभव है। उस समय शायद मनुष्य के शरीर की कुछ अस्थियों को जमाकरके गाडने की प्रथा थी। कुछ ऐसे शच–भस्म के पात्र भी मिले है, जिनमें जली हुई राख के साथ हड्डियॉ भी मिली है। इससे यह अनुमान निकलता है कि वहॉ मुर्दा गाडने और जलाने दोनों की प्रथा प्रचलित थी। हडप्पा में एक मुख्य कब्रगाह का भी पता चला है। वहॉ से प्राप्त अवशेषों के आधार पर कहा जाता है कि शव का सिर उतर की ओर और शव लंबा रखा जाता था। मृतको के साथ उनके जेवरात और श्रृंगार की चीजें गाडी जाती थी। कुछ शवों के दाहिने हाथ की अगुॅली में तॉबे की अगुॅठी मिली है। गले के हार, पैर के पाजेब, आईने इत्यादि भी मिले है। लोथल के उत्खनन से ऐसे गडे हुए मुर्दो के अवशेष मिले है। कहीं–कहीं स्त्री पुरूष के शव के साथ ही गड मिले है और एक स्थान पर तो अनगिनत लाशों का ढेर मिले है,जिससे कुछ लोग यह अनुमान लगाते है कि किसी युध्द के बाद सभी मृतको की लाशे एक सभी मृतको की लाशे एक ही स्थान पर गाड दी गई होगी। हडप्पा की समकालीन सभ्यताओं में यह प्रथा प्रचलित थी, ऐसा मालूम पडता है। प्राचीन सुमेर में भी शवों की रक्षा का प्रबंध था। मृतक–संस्कार के दो प्रकार थे– (क) मृत शरी को पृथ्वी को सौंप देना या उसकी समाधि लगा देना, और (ख) मृत एक मानव–अस्थिपंजर के निकट एक बकरे का अस्थिपंजर मिला है। इसके आधार पर कुछ विद्वानों ने यह अनुमान लगाया है कि मृतक के अंतिम संस्कार के संबंध में ही कदाचित बकरे कर बलि दी गई होगी। एक ऐसा भी मत है कि मृतक के अंतिम संस्कार के संबंध में ही कदाचित बकरे की बलि दी गई होगी। एक ऐसा भी मत है कि शब से पशु–पक्षियों को तुष्ट कर उन्हें दफनाया जाता था। जीववाद और पुनर्जन्म के प्रमाण भी वहां के अवशेषो से प्राप्त होते है।

मातृदेवी और परम–पुरूष की उपासना– हडप्पा सभ्यता के विभिन्न स्थानों के उत्खनन में भारी संख्या में खडी एवं अर्ध्द नग्न नारी की मूतियॉ प्राप्त हुई है । विद्वानों का मत है कि ये मूतियॉ मातृदेवी या प्रकृति देवी की मूतियॉ है। सर जॉन मार्शल के मत में हडप्पा सभ्यता के देवगणों में मातृदेवी का स्थान सर्वश्रेष्ठ था। प्राचीन संसार में मातृदेवी की पूजा लोकप्रिय थी। इस प्रकार की मूतियॉ ईरान, मेसेपोटामिया, सीरिया, फिलिस्तीन, एशिश माइनर, मिस्त्र, पश्चिमी देशों में भी मिला हैं।दक्षिण भारत में भी ऐसि मूतियॉ मिली है। ऋग्वैदिककाल में भी आद्यशक्ति या प्रकृति, पृथ्वी अथवा अदिति के रूप में मातृपूजा का उल्लेख मिलता है मातृदेवी को पशुबलि अथवा नरबलि भी दी जाती थी। इस बात की सम्भावना है कि कालान्तर में मातृदेवी की इस उपासना से ही शक्ति पूजा का परम्परा का विकास हुआ होगा। मातृदेवी की मूतियॉ प्रायः नग्न अथवा अर्ध्दनग्न रूप से मिली है। मूर्ति की कमर मे पटका और मेखला, गले में गुलूबन्द अथवा हार, कानों में कर्णफूल और हाथों में चूडियॉ आदि अंकित है। कुड मूतियॉ में जननी का रूप दिखाया गया है जिनमें शिशु को स्तनपान करते हुये प्रदर्शित किया गया है। एक नारी मूर्ति के गर्भ से एक वृक्ष निकलता हुआ प्रदशित किया गया है सम्भवतः यह वानस्पतिक जगत की देवी का प्रतीक हो। एक अन्य मूर्ति के शीश पर एक पक्षी पंख फैलाये बैठा है। इन सब बातों से स्पष्ट है कि हडप्पा सभ्यता में मातृदेवी को सम्पूर्ण विश्व की सृजक, पालक एवं पोषक के रूप में माना जाता था। पीपल की दो शाखाओं के बीत में एक मातृदेवी मूर्ति के निचले भाग में अनेक खडे व्यक्ति उस बलि समारोह में भाग लेने वाले प्रतीत होते है। बहुत–सी मूर्तियों के दोनों ओर प्याले अथवा दीपक हैं और इन मूर्तियों के अग्रभाग पर धूम्र के निशाल है। इससे कल्पन की जाती है इन प्यालों में तले अथवा धूप जलाते थे।

हडप्पाकालीन सीलों की खुदाई में एक मुद्रा मिली है। इस पर एक नग्न व्यक्ति योग–मुद्रा में चित्रित किया गया है। इस व्यक्ति के तीन मुख है। उनके मस्तक पर सिरस्त्राण के दोनों और दो सींग है जो दूर से देखने पर त्रिशूल की आकृति की तरह दिखाई देता है। इस व्यक्ति के बायी ओर एक गैंडा और एक भैंसा है और दायीं ओर एक हाथी औश्र एक व्याघ्र है। आसने के नीचे एक हिरन बैठा है। मुद्रा के उुपरी हिस्से पर 6 शब्द अंकित है। यदि इन्हें पड लिया गया होता तो इसका समीकरण करने में कोई कठिनाई नहीं होती। परन्तु हडप्पा–लिपि को अभी तक ठीक से पढा नहीं जा सका है। फिर भी, उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर को योगीश्वर, त्रिशूलधारी, पशुपति, त्रयम्बक, त्रिनेत्र आदि कहा जाता रहा है। खुदाई में एक अन्य मुद्रा मिली है जिस पर एक योगासीन व्यक्ति का चित्र है। चित्र के दोनों और एक–एक नाग तथा सामने दो नाग बैठे है। विद्वानों का मानना है कि नागों से

घिरा हुआ योगी का यह चित्र भी भगवान शिव की ही है क्योंकि वे भी अपने गले में नाग धारण करते है। एक अन्य मुद्रा पर एक धनुर्धारी शिकारी का चित्र पाया गया है। कुछ विद्वानों का मानना है कि यह चित्र किरात वेशधारी भगवान शिव का है। जो भी हो, इता निश्चित है कि हडप्पा सभ्यता के निवासी एक परम पुरुष की पूजा करते थे और उनके परम–पुरूष का प्रतीक आधुनिक हिन्दू धर्म के भगवान शिव से काफी मिलता–जुलता है।

परम पुरूष और परम नारी की पूजा के साथ–साथ हडप्पा सभ्यता के लोग प्रजनन शक्ति की लिंग एवं योनि के प्रतीको के रूप में भी पूजा करते थे। हडप्पा और मोहनजोदडो की खुदाई में बहुत से लिंग मिले है। वे सामान्य पत्थर, लाल पत्थर अथवा नीले पत्थर के बने है। छोटे–छोटे आकार से लेकर चार फीट की उॅचाई तक के लिंग मिले है। विद्वानों का मत है कि छोटे आकार के लिंगो की पूजा लोग अपने–अपने घरों में ही करते थे और बडे आकार के लिंग विशेष स्थानों पर प्रतिष्ठित करके पूजे जाते थ। आधुनिक हिन्दू धर्म में लिंग पूजा शायद हडप्पा सभ्यता की ही देने प्रतीत होती है, यद्यपि ऋग्वेद में लिंग–पूजा का तिरस्कारपूर्ण उल्लेख मिलता है। मैके महोदय का मत है कि लिंग की आकृति के जो पत्थर मिले है उनहे पूजा का प्रतीक नहीं समझना चाहिये। सम्भवतः उनसे कुटने–पीसने का काम लिया जाता रहा होगा जैसाकि आज भी मूसल, लोढे अथवा बट्टे से लिया जाता है। खुदाई में पत्थर, चीनी मिट्टी तथा सीप के बने बहुत से छलले मिले है जिनका आकार आधे इंच से लेकर चार इंच तक है। बहुत से विद्वानों ने इन छललों को योनि का प्रतीक मानकर यह मत व्यक्त किया है कि हडप्पावासी योनि का भी पूजा करते थे। आर्य लोग योनि पूजक नहीं थे। अतःयह प्रथा निस्सन्देह अनायों की देन है। छललों के बारे में मैके महोदय का मत है कि अधिकांश छलले स्तम्भों के आधार थे, न कि योनि के प्रतीक।

वृक्षों और पषुओं की उपासना– खुदाई में प्राप्त बहुसंख्यक मुद्राओं, मूर्तियों और बर्तनों पर पीपल और बबूल की आकृतियॉ अंकित है, जबकि कुछ पर नीम, खजूर एवं शीशमके चित्र भी मिलते है। विद्वानों का मत है कि हडप्पा सभ्यता में वृक्ष–पूला प्रचलित रही होगी। सम्भवतः इन्हे पवित्र माना जाता था और शायद उन लोंगो का विश्वास था कि इनमें देवी आत्माऍ निवास करती है। पीपल को सर्वाधिक पवि माना जाता था । एक मुद्रा पर दो पशुओं के शीश पर नौ पीपल की पंक्तियॉ अंकित है। एक अन्य मुद्रा पर एक नग्न स्त्री का चित्र है जिसके दोनों और एक–एक टहनियॉ पीपल की है। एक मुद्रा में सिर पर त्रिशूलधारी लम्बें बालों वाला एक पुरूष एक वृक्ष की दो शाखाओं के बीच नंगा खडा है, उसके सामने लम्बे बालों वाला एवं सींगो वाला एक पुजारी हाथें में कडा पहने घुटनों के बल बैठा है और उसके पीछे एक मिश्रित जानवर है। एक अन्य मुद्रा पर बबूल का वृक्ष अंकित है जिसकी एक बैल रक्षा कर रहा है। कहीं–कहीं पर सर्प या नाग देवता भी वृक्ष की रक्षा करता हुआ दिखाया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि हडप्पा सभ्यता के निवासियों में वृक्ष–पूजा के दो रूप के दो रूप प्रचलित थे। एक–वृक्ष को उसके प्राकृतिक रूपमें पूजना जैसे तुलसी का पूजन और दूसरा, वृक्ष को किसी देवता के प्रतीक के रूप में पूजना, जैसे कि पीपल की पूजा। ऐसा प्रतीत होता है कि उन लोगों में तुलसी, पीपल, खजूर, बबूल, नीम आदि वृक्षों की पूजा अधिक प्रचलित रह होगी। भारत में वृक्ष–पूजा की परम्परा काफी पुरानी है। बौध्द लोग भी पीपल की पूजा करते थे और आज भी हिन्दू–धर्म की पूजा होती है।

वृक्ष पूजा के साथ–साथ हडप्पा सभ्यता के लोग पशु–पूजा में भी विश्वास रखते थे। कुछ मुद्राओं पर बैल के चित्र मिले है। खिलौने के रू‍ में भी बैल मिले है। मोहनजोदडों में एक ताम्र–पत्र पर कुबडदार बैल अंकित किया हुआ मिला है। विद्वानों का अनुमान है कि शक्ति के प्रतीक के रूप में बैल की पूजा काफी लोकप्रिय रही होगी। बैल की भॉति भैस और भैंसा की पूजा भी की जाती थी, क्योंकि अनेक मुद्राओं पर इनके चित्र मिले है। गाय की पूजा के बारे में हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते। परन्तु नाग–पूजा काफी प्रचलीत थी एक मुद्रा पर नाग की पूजा करते हुये एक मनुष्य का चित्र, अंकित है। योगासन में बैठे शिव के दोनों और एक–एक नाग तथा सामने दो नाग चित्रित है। एक ताबीज पर एक नाग चबूतर पर लेटा है। मुद्राओं पर हाथी, बाघ, भेड, बकरी, ग ॅडा, हिरन, उुंट, घडियाल, गिलहरी, तोता, मोर, बतख,मुर्गा आदि पशुओं के चित्र भी मिले है। सम्भव है ये सभी पशु–पक्षी उन लोगों के देवी–देवताओं के वाहन रहे हों जैसाकि हम हिन्दू धर्म में देखते है। हडप्पा सभ्यता के लोग पशुओं की आकृति विचित्र ढंग से बताते थे। कुछ पशु आधे मनुष्य और आधे पशु थे। आधा भेड , आधा बकरा, आधा हाथी और आधा बैल या इसी प्राकर अन्य मिश्रण से पशुओं की आकृति बनाते थे। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे इनमें देवी अंश मानकर इनकी पूजा करते थे।

धार्मिक परम्पराओं में प्रतीक मुद्रा– उत्खनन में प्राप्त अनेक अवशेषों पर सींग, चक्र, स्तम्भ और स्वास्तिक के चित्र मिले है। विद्वानो ंका मत है कि इन चिहनों का भी कुछ धार्मिक महत्व रहा होगा। सम्भव है कि ये चिहन किसी देवी–देवता के प्रतीक रहे हो अथवा किसी धार्मिक भावना के प्रतीक रूप में इनकी पूजा की जाती हो। कुछ विद्वानो का मानना है कि ये उस समय के लोगों के अन्धविश्वास के प्रतीक रहे हो और इनमें से माध्यम रोग–व्याधि को दूर भगाया जाता हो। कुछ मुद्राओं पर अंकित चित्रों मे नर–नारियों को सींग युक्त दिखलाया गया है। शीश पर सींग धारण करने का भी कुछ धार्मिक महत्व रहा हो। इसी प्रकार, स्तम्भ, चक्र और स्वास्तिक आदि के प्रर्दशन का भी धार्मिक महत्व रहा हो। हिन्दू समाज में स्वास्तिक चिहन आज भी पवित्र एवं शुभ समझा जाता है। बौध्दो में चक्र का धार्मिक महत्व है।

मुद्रओं पर अंकित देवी–देवताओं के चित्रों तथा प्रतीकों के अंकन इतना तो निश्चित हो जाता है कि हडप्पा सभ्यता के निवासी साकार उपासना करते थे और उनमें मूर्तिपूजा प्रचलित रही होगी। परन्तु वे लोग अपनी मूतियॉ को कहॉ प्रतिष्ठित करते थे, इसका उत्तर विवादास्पद है, क्योंकि खुदाई में अभह तक कोई ऐसा नहीं मिला है जिसे हम मन्दिर अथवा उपासना स्थल कह सकें। कुछ विद्वानों का माना है कि मोहनजोदडों में जिस स्थान पर कुषाणकालीन बौध्द स्तूप खडा है, उसके नीचे सिन्धुवासियों का मन्दिर दबा पडा है।

मार्शल महोदय ने मुद्राओं पर अंकित नारियों की विभिन्न आकृतियों का अध्ययन करने के बाद यह मत व्यकत किया है

कि ये नारी मूर्तियॉ मन्दिर की उपासिकाओं की होगी। इसी प्रकार, खुदाई में प्राप्त नग्न रूप में नृत्य करती हुई एक नर्तकी को विद्वानों ने देवदासी या उपासिका मानकर हडप्पा सभ्यता में देवदासी प्रथा होने की कल्पना भी की है। धार्मिक प्रथाओं में शारीरिक शुद्वि पर विशेष ध्यान दिया जाता था। मुद्राओं पर अंकित कुछ स्तम्भों के उपर धूप–दीप जलते दिखाये गये है और यदा–कदा उनके नीचे आग जलती दिखाई गई है। सम्भव है कि धूप–दीप का संबंध उनकी किसी धार्मिक क्रिया से रहा हो। संगीत एवं नृत्य के द्वारा देवताओं को प्रसन्न करने की परिपाटी भी रही होगी। देवताओं को प्रसन्न करने के लिये पशु बलि तथा नर बलि भी दी जाती थी। मूर्तियॉ की योगासान मुद्राओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हडप्पा सभ्यता में योग साधना का भी महत्व था।

मृतको को दफनाने की विधि–मोहनजोदडो में कोई शव–स्थान अथवा समाधि नहीं मिली है। व्हीलर महोदयन को हडप्पा में अनेक समाधियॉ मिली थी। कालीबंगा में भी कुछ कब्रे मिली है। इनमें शवों के सिर अधिकतर उत्तर दिशा की ओर रख मिलता है। आजकल भी हिन्दू समाज में मरने के बाद मृतक का सिर उत्तर दिशा की ओर ही रखा जाता है। शवों के साथ विविध आभूषण, वस्त्र और अन्य वस्तुऍ भी मिली थी, जिनसे अनुमान किया जाता है कि सिन्धुवासी सम्भवतया परलो के जीवन की कल्पना करते थे। हडप्पा सभ्यता के केन्द्रों पर इस प्रकार की समाधियों और शवोत्सर्ग की अन्य परिस्थितियों के आधार पर विश्वास किया जाता है कि हडप्पाई लोग तीन प्रकार के शवों का संस्कार करते थे। पहला, पूर्ण समाध्णि के अन्तर्गत समाधि–सामग्री एवं अर्पण के साथ पूर्ण मृतं शरीर को समाधिस्थ कर दिया जाता था। इस प्रकार लगभग 30 अस्थि–पंजर अब तक प्राप्त हो चुके है। दूसरा, आंशिक समाधिकरण, जिसमें शव को पशु–पक्षियों के खाने के बाद बचे भाग को अनेक मिट्टी के पात्र में रखकर जमीन में गाड दिया जाता था। इस प्रकार की अब तक केवल 5 समाधियॉ प्राप्त हुई है। तीसरा, अग्नि संस्कार, जिसमें शव को जलाया जाता था और कभी–कभी उसकी भस्म को चौडे मुॅह वाले कलश में रखकर जमीन के भीतर गाड दिया जाता था। इन शवभस्म–कलशों में अनके छोटे पात्र, जानवरों एवं पक्षियों की हड्डियां, मछली के कॉटे, मनके, चूडियॉ, छोटी–छोटी मूर्तियॉ आदि प्राप्त हुई है। दाहकर्मोपरान्त सामाधि के 6 उदाहरण, सडक या माकन के फर्श के नीचे से पाये गया है।

समाजिक जीवन का स्वरूप

समाज का स्वरूप–उत्खनन से प्राप्त मानव अस्थि–पंजरों के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि हडप्पाई सभ्यता में प्रोटो–आस्ट्रेलायड, भूमध्यसागरीय, मंगोलायड तथा आल्पिनायड इन चार जातियों के लोग निवास करते थे। अर्थात् इस सभ्यता के नगर विभिन्न संस्कृतियों तथा आल्पिनायड इन चार जातियों के लोग निवास करते थे। अर्थात् इस सभ्यता के नगर विभिन्न संस्कृतियों के मिलन–केन्द्र बने हुये थे। समाज साधारणतः चार वर्गो में बॅटा था–प्रथम वर्ग विद्वानों का रहा होगा जिसमें पुजारी, ज्योतिषी, चिकित्सक आदि शामिल थे।दूसरा वर्ग योध्दाओं का रहा होगा, यद्यपि उत्खनन के लिये उन पर बने गुम्बज आदि इस बात के सबल प्रमाण प्रस्तुत करते है कि नगर एवं जनपद में शान्ति एवं सुरक्षा की व्यवस्था योध्दा–वर्ग करता रहा होगा। तीसरा वर्ग व्यापारियों, दुकानदारों, शिल्पयों एवं कारीगरों का रहा होगा। चौथे वर्ग में गृह–सेवक, किसान, श्रमिक आदि रहे होंगे।

खुदाई में मिली वस्तुओं से उस समय के लोगों के विभिन्न प्रकार के काम–धन्धों की जानकारी उपलब्ध होती है। इस जानकारी के आधार पर यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज में सभी लोगों का समाजिक स्तर एकसमान नहीं था।

सिंधु सभ्यता का स्वरूप और विषेशताऍ–जैसा कि उपर कह चुके है, सिंधुघाटी की सभ्यता प्रस्तर–धातुयुगीन ;बींसबवसपजीपबद्ध थी और इस सभ्यता में दोनों के अवशेष मिलते है। कॉसे का युग शुरू हो चुका था और वहॉ उस काल की सर्वोत्कृष्ट विशेषताऍ मिलती है। यह सभ्यता व्यापाप्रधान और शहरी थी। इससे अध्ययन एवं अनुशीलन से इतना स्पष्ट है कि इसकी उन्नति के पीछे साधना एवं अनुभव की लंबी परंपरा चली आ रही थी। मार्शल के अनुसार इसकी तुलना समकालीन सभ्य संसार के अन्य भागों में इस मात्रा में नागरिक सुविधा और विलासित उपलब्ध नहीं थी।अस्त्र–शस्त्र के अभाव में हम यह निर्णय निकाल सकते है कि यह सभ्यता शांतिमूलक थी। सार्वजनिकता और समष्टिवादिता भी इसकी विशिष्टता कही जा सकती है, यद्यपि इसमें दो स्पष्ट वर्गो के होने का प्रमाण भी मिलता है। सामूहिक जीवन की ओर लोगों का प्रयास अवश्य था, ऐसा कहना असंगत नहीं होगा। सीनीकरण और विशेषीकरण पर ही वहॉ औद्योगिक और आर्थिक जीवन आधारित था। वहॉ के लोग विज्ञ थे, विदेशों से संपर्क रखते थे और सांस्कृतिक आदान–प्रदान में सक्षम थे। मातृसत्तात्मक समाज था अथवा नहीं, इसका पूरा प्रमाण तो नहीं मिलता; परंतु मातृदेवी की प्रधानता इस ओर संकेत अवश्य करती है। शहरी सभ्यताओं की सारी विशेषाऍ हमें यहॉ मिलती है।

परिवार– खुदाई से प्राप्त छोटे–बडे आवास–गृहों के बहुसंख्यक अवशेष इस बात के द्योतक है कि परिवार ही समाज की मूल इकाई था। विद्वानों का अनुमान है कि उस युग में भी संयुक्त परिवार प्रणाली प्रचलित रही होगी और प्रत्येक परिवार में माता–पिता, भाई–बहिन, पुत्र–पुत्री, पोता–नाती आदि एक साथ रहते थे। परन्तु परिवार पितृसत्तात्मक थे अथवा मातृसत्तात्मक , इस प्रश्न का निश्यत उत्तर देना सम्भव नही है। फिर भी, खुदाई में प्राप्त नारी मूर्तियों की बहुलता और मातृदेवता की लोकप्रियता के आधार पर विद्वानों का मानना है कि हडप्पा सभ्यता की मातृप्रधान था अर्थात् परिवार में माता–पिता, भाई–बहिन, पुत्र–पुत्री, पोता–नाती आदि एक साथ रहते थे। परन्तु परिवार पितृसत्तात्मक थे अथवा मातृसत्तात्मक, इस प्रश्न का निश्चय उत्तर देना सम्भव नही है। फिर भी, खुदाई में प्राप्त नारी मूतियों की बहुलता और मातृदेवता की लोकप्रियता के आधार पर विद्वानों का मानना है कि हडप्पा सभ्यता की मातृप्रधान था अर्थात् परिवार में माता का स्थान सर्वोपरि होता था। द्रविड समाज भी मातृ प्रधान था।

स्त्रियों की महिमा–ठोस साक्ष्यों के अभाव में समाज में नारी का स्थान सुनिश्चित करना के समाज मे नारी का आदरपूर्ण स्थान

था। वह परिवार की मुखिया एवं पोषिका समझी जाती थी उनका मुख्य कार्य बच्चों का लालन–पालन एवं अवकाश के समय में घर में सूत कातना था।मुद्राओं पर अंकित विभिन्न नारी–चित्रों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि उस समय में स्त्रियों में पर्दा–प्रथा प्रचलन नहीं था और वे धार्मिक तथा सामाजिक उत्सवों में पुरूषों के साथ समान रूप से सम्मिलित होती थी।

खान–पान और रहन–सहन –खुदाई में प्राप्त वस्तुओं में अस्त्र–शस्त्रों की अल्पता इस बात का सूचक है कि हडप्पाई लोग शान्तिप्रिय थे और समृध्द जीवन बिताने की कामना करते थे खुदाई में प्राप्त कलश, थालियॉ, कटोरी–कटोरा, गिलास, परात, कडाही, प्याली, तश्तरी, घडा , चम्मच आदि तथा मुद्राओं पर अंकित पलंग, कुसियॉ, तिपाइयॉ आदि उनकी सम्पन्नता को प्रकट करते है। इन वस्तुओं के देखने से स्पष्ट हो जाता है कि जीवनोपयोगी वस्तुओं के निर्माण में पत्थर का स्थान कॉसा एव तॉबा ने ले लिया था। वैसे खुदाई मं प्राप्त अधिकांश मूतियॉ नग्न है, परन्तु हमें मालूम है कि वे लोग वस्त्रों का प्रयोग करते थे। सामान्य लोग निश्चित रूप से कम तक कोई कपडा पहनते थे और उच्च वर्ग के लोग शरीर के उुपरी भाग को शाल से ढकते थे।खडिया मिट्टी से बनी एक मूर्ति से जान पडता है कि शरीर पर दो वस्त्र धारण किये जाते थे;जिनमें एक उुपरी वस्त्र शाल की भॉति बायें कन्धे के उुपर से दाहिनी कोख तक ओढने के काम आता था और दूसरा अधोवस्त्र आधुनिक धोती भॉति कमर से नीचे पहना जाता था। स्त्रियों के वस्त्र भी प्रायः इसी के समान होते थे। उस समय की सम्पन्नता के आधार पर यह भी अनुमान लगाया जाता है कि वे लोग भिन्न–भिन्न ऋतुओं में भिन्न प्रकार के सूती एवं उुनी वस्त्रों का प्रयोग करते थे। कुछ स्त्रियॉ पगडी भी पहनती थी। मातृदेवी की मूतियॉ कुल्हाडी के आकार की शिरोभूषा से अलंकृत है जो फीते की सहायता से सिर पर बॅधी होती है। कुछ स्त्री–मूतियॉ नुकीली टोपी पहने है। कुछ पुरूष मूतियॉ भी टोपी पहनी है।कुछ पुरूष–स्त्री मूतियॉ सिर पर सींग या बतख धारण किये है। हडप्पा सभ्यता के लोगों को केश–विन्यास का विशेष शौक था। खुदाई में प्राप्त शीशा और कंघी इस कथन की पृष्टि करते है। मूतियों से पता चलता है कि जो लोग दाढी और मूॅछ दोनों रखते थे, वे अपने केशों को सॅवारकर पीछे की ओर फीता या बालों के पिन की सहायता से सॅवारे रहते थे। ये फिते सोना, चॉदी या तॉबा के बने होते थे। खुदाई में उस्तरा (अस्तुर) भी मिला है जिससे पता चलता है कि वे लोग हजामत भी बनाते थे। कुछ मुद्राओं और मूतियों से पता चलता है कि कुछ लोग दाढी तो रखते थे परन्तु मूॅछे मुंडवा देते थे। स्त्रियों को केश–विन्यास का विशेष शौक था। आजकल की हिन्दू स्त्रियों की भॉति वे बीच में मॉग निकालकर चोटी करती थी। कुछ स्त्रियॉ अपनी चोटी को शीश पर कई वृत्तों में लपेट लेती थी। कुछ बालों को जूडा बनाकर पीछे फीते से बॉधे लेती थी। स्त्रियॉ काजल, सुरभा, सिंदूर, बालों की पिन ,इत्र तथा पाउडर का प्रयोग करती थी। उत्खनन में काजल शलाकाऍ प्राप्त हुई है।घोंघे के एक पात्र में धूल–सी कोई वस्तु प्राप्त हुई है जो सम्भत पाउडर है। स्त्रियों के श्रृंगार एवं प्रसाधन के अनेक सामान प्राप्त हुये है मैंके महोदय के अनुसार वे लिपस्टिक का भी प्रयोग करती थी।

हडप्पा सभ्यता के लोग आभूषण प्रेमी थे। खुदाई में कण्ठाहर, कर्णफूल, हंसूली, भुजबन्ध, कंगन , छडा, चूडियॉ, ॲगूठी, करधनी, पायजेब तथा नाक में पहनने के आभूषण मिले है।इनको बनाने में मूल्यवान पत्थरों, सोना, चॉदी, तॉबा, और कॉसा आदि धातुओं का प्रयोग होता था। धनी और निर्धन सभी अनेक प्रकार के आभूषण पहना करते थे। एक या अनेक लडियों के बहुत से हार उपलब्ध हुये हैं जिनके बीच में प्रायः लटकन लगे हुये है। अगूॅठियॉ अधिक संख्या में मिली है। चूडियॉ या कंगन–सोना, चॉदी, तॉबा, कॉसा, शंख या मिट्टी के बनाये जाते थे।किन्हीं–किन्हीं पर पच्चीकारी का काम किया जाता था। गोलाकार मनकों की 6 लडियों वाला एक कंगन उत्कृष्ट कारीगरी का सुन्दर नमूना है।इसी प्रकार उपलब्ध दो करधनियॉ भी बहुत सुन्दर बनी है। पुरूष की कण्ठहार ,कंगन और ॲगूठियॉ धारण करते है। हडप्पाकालीन लोगों का खानपान निश्चय ही उच्च स्तर का रहा होगा। गेहूॅ, जौ, चावल, दाल, तिल तथा विविध फल एवं सब्जियॉ उनके मुख्य खाद्य पदार्थ थे। मुद्राओं पर अंकित चित्रों से उनके मॉसाहारी होने का प्रमाण भी मिलता है। सम्भवतः वे लोग मछली, गाय, सूअर, भेड,तथा मुर्गे का मॉस खाते थे। गाय, भैंस तथा बकरी दूध का उपयोग किया जाता था। परन्तु यह कहना कठिन है कि वे लोग दूध से घी निकालना जानते थे अथा नही। हडप्पाकालीन लोगों में मद्यापान की प्रथा थी अथवा नहीं, यह कहना भी कठिन है; क्योंकि इस सम्बन्ध में अभी तक ठोस प्रमाण नहीं मिले है।

आमोद–प्रमोद – हडप्पा सभ्यता के लोग आमाद–प्रमोद के शौकीन थे। मछली पकडना और शिकार करना इनके मनोरंजन के प्रिय साधन थे। एक मुद्रा पर कुछ लोगों को तीर–कमान से एक बारहसिंगे का शिकार करते हुये दिखलाया गया है। एक अन्य मुद्रा पर एक पुरूष को दो शेरों के साथ लडते हुये दिखलाया गया है। अवशेषों पर उत्कीर्ण चित्रों से पता चलता है कि वे लोग मनांरजन के लिये सौंडो, मुर्गो, तीतर और बटेरों को लडाया करते थे। खेल–कूद और व्यायाम में भी उनकी रूचि थी। एक मुद्रा पर एक व्यक्ति को व्यायाम करते हुये दिखलाया गया है। वे लोग घर में बैठकर भी अनेक खेल खेला करते थे। पत्थर, मिट्टी और हाथी दॉत के अने हुये अति सुन्दर पासे तथा गोटियॉ मिली है। घनाकार और चिपटे दोनों प्रकार के पासे होते थे।चिपटे पासे साधारण तथा हाथी दॉत के होते थे। इनकी सतहों पर बिन्दुओं से नम्बर पडे होते थे। पासे के खेल कई प्रकार से खेले जाते थे। जुआ खेलना भी मनोरंजन का एक साधन था। वे लोग शतरंज अथवा चौपड से मिलते–जुलते खेले करते थे। नृत्य और संगीत उस युग के लोगों के अमोद–प्रमोद का मुख्य साधन था। धातु की बनी हुई नर्तकी एक सुन्दर मूर्ति मिली है। यह मूर्ति बिन्लकुल सजीव प्रतीत होती है। नर्तकी त्रिभंगी मुद्रा में नृत्य करने के लिये तैयार दिखलाई पडती है। कुछ मुद्राओं पर तबले और इन सभी से उन लोगों की संगीतप्रियता का पता चलता है।

हडप्पा सभ्यता के निवासियों ने अपने बच्चों के मनोरंजन का भी समुचित प्रबन्ध कर रखा था। खुदाई में बच्चों के खेलने के बहुत से खिलौन मुख्य है। कुछ पशु आकृति वाले खिलौन ऐसे है जिनका सिर हिलता है। मोहनजोदडो और हडप्पा में जो बैल के खिलौने मिले है उनके गले में छेद नहीं मिलता। परन्तु चन्हुदडो के बैल के खिलौनों के गले में स्पष्टताया छेद दिखाई देते है। ऐसा प्रतीत होता है कि छोटों में रस्सी बॉधकर बच्चे इन्हें खींचते थे। मिट्टी के बने गॅडे के जो खिलौने भिले है, वे सुन्दर नहीं है, परन्तु चीनी मिट्टी की बनी भेड की मूतियॉ कला की दृष्टि से सुन्दर है। चन्हुदडो में एक अति सुन्दर अलंकृत हाथी का खिलौना

मिला है। कुछ खिलौनों में हाथ–पैरों को अलग से धागे की सहायता से जोडा गया है और धागे को खींचने पर खिलौने के हाथ–पैर हरकत करते है।

शिक्षा का स्वरूप– हडप्पा सभ्यता के लोग लिखना–पढना जानते थे और उन लोगों ने अपने बच्चों एवं युवकों के लिये शिक्षा का एक विकसित पाठ्यक्रम भी अवश्य बनाया होगा। लिखने का काम मुख्यतः तख्तियों पर होता था। खुदाई में कुछ तख्तियॉ मिली भी है। लकडी की इनत तख्तियों पर लकडी की कलमों से लिखा जाता था। खुदाई में प्राप्त बहुसंख्यक खिलौनों के आधार पर विद्वानों कर अनुमान है कि बच्चों को प्रत्यक्ष ज्ञान उपलब्ध कराने में इनका प्रयोग किया जाता था। तोल और माप के निश्चित साधनों से अनुमान होता है कि बच्चों की अंकगतिणत की शिक्षा दी जाती थी। खुदाई में प्राप्त बांटों की दशमलव इकाइयों के आधार पर यह अनुमान भी है कि हडप्पाकाली सभ्यता के लोग दशमलव पध्दति से परिचित थे। भवन और नगर–निर्माण की निश्चित योजना से स्पष्ट है कि उन लोगों को ज्यामिति के उच्च सिध्दान्तों की पर्याप्त जानकारी थी और विद्यार्थियों को इनकी शिक्षा दी जाती थी। विद्वानों का मानना है कि पर्याप्त जानकारी थी ओर विद्यार्थियों को इनकी शिक्षा दी जाती थी। विद्वानों का मानना है कि उन लोगों को ज्योतिष के मूल सिध्दान्तों की भी जानकारी रही होगी। सार्वजनिक स्वास्थ और सफाई के प्रति लोगों की गहरी रूचि इस बात का संकेत है कि वे लोग रोगों से बचने का उपाय जानते थे और उन्हे चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान भी था। इस प्रकार उनके पाठ्यक्रम मे अंकगणित, ज्यामिति, ज्योतिष एवं चिकित्सा के विषय अवश्य रहे होंगे। सम्भव है कि विद्यार्थियों को संगीत, नृत्य एवं चित्रकला की भी शिक्षा दी जाती थी । शिल्प सम्बन्धी शिक्षा घरों पर ही उपलब्ध करा दी जाती थी।

लिपि का ज्ञान– हडप्पा सभ्यता के भग्नावशेषों से प्राप्त बहुत– सी मुद्राओं , ताम्रपत्रों और मिट्टी के बर्तनों पर अनेक प्रकार के लेख उत्कीर्ण है। लेख केवल एक या दो पक्तियों वाले ही है। इसलिये विद्वान लोग इन लेखों को पढने अथवा लिपि की सही जानकारी प्राप्त करने में सफल नहीं हो पाये है। हण्टर महोदय का मत है कि ये लेख चित्र लिपि में है और इसकी चित्रात्मक लिपि कहना चाहिये। लिपि का प्रत्येक चित्र अथव चिहन किसी विशेष शब्द अथवा वस्तु को प्रकट करता है और विद्वानो ने अब तक ऐसे 369 चिहनों की सूची बनाई है। विद्वानों का मानना है कि यह लिपि पहली पंक्ति में दाहिनी ओर से बांयी ओर लिखि जाती थी और दूसरी पंक्ति बांयी ओर से दाहिनी ओर लिखि जाती थी। इस प्रकार की लिखावट को ''बस्त्रोफेदन'' (Boustrophedon) कहा जाता है। विद्वानों का यह भी मानना है कि हडप्पाई लिपि सुमेरिया और मिस्त्र की लिपियों की तुलना में अधिक उन्नत और परिष्कृत थी।

कला का ज्ञान–हडप्पा सभ्यता की नगर–निर्माण और भवन–निर्माण कला, संगीत एवं नृत्य तथा केश–विन्यास का उल्लेख हम पहले की चुके है। मिट्टी के बर्तनों और मूतियों का उल्लेख भी यथास्थान पर किया जा चुका है।मूर्तिकला के क्षेत्र में पत्थर और धातु की बनी मूतियॉ विशेष अमेजल पत्थर बाहर से मंगाये जाते थे, फलतः पाषण मूतियों की संख्या बहुत कत है। मोहनजोदडो से प्राप्त एक पाषण मूर्ति का अधोभाग टूटा हुआ है।उर्ध्व भाग अति सुन्दर एवं कलात्मक है। मूर्ति की ऑखे अधखुली है और ऐसा लगता है मनो वह व्यक्ति योगस्थ है। मूर्ति के सिर पर बाल तथा मुख पर दाढी है। मैके महोदय के अनुसार यह किसी पुजारी की मूर्ति प्रतीत होती है; जबकि रामप्रसाद चनदा के अनुसार यह किसी योगी की मूर्ति है। मूर्ति की मुद्रा एवं अलंकरण पर्याप्त कलात्मक है।

हडप्पा से प्राप्त दो पाषाण मूर्तियों की विद्वानों ने काफी प्रशंसा की है। इनमें एक लाल पत्थर की बनी मानव–मूर्ति है। इस मूर्ति का सिर टूटकर कहीं खो गया है, परन्तु शेष शरीर का अनुपात और सौष्ठव सराहनीय है। मूर्ति के विभिन्न अंग अलग–अलग बनाकर किसी मसाले से जोडे गये प्रतीत होते है। दूसरी मूर्ति काले पत्थर की है और वह किसी नर्तक की प्रतीत होती है। नृतक नृत्य की मुद्रा में अपला बायॉ पैर पृथ्वी के उुपर उठाया हुआ है। मूर्ति का मुद्रा स्वाभाविक तथा शरीर मॉसल एवं स्फूर्तिपूर्ण है। पाषाण की मूर्ति का मुख्य शरीर पत्थर का है, परन्तु सींग और कान किसी दूसरी वस्तु के बने हुये है। पाषण निर्मित लिंग एवं योनियॉ भी मिली है। मूर्ति के निर्माण लिये पाषाण को काटने, तराशने तथा उनमें पच्चीकारी का काम करने में उस समय के कलाकारों ने पर्याप्त दक्षता प्राप्त कर ली थी। हडप्पाई लोग विविध धातुओं से परिचित थे और उन्हें गलाना, पीटना, काटना, ढालना आदि जानते थे।उन्हें धातुओं के मिश्रण से तीसरी धातु बनाने की कला भी ज्ञात थी। यही कारण है कि उत्खनन में विविध धातुओं की अनेक वस्तुऍ प्राप्त हुई है। मोहनजोदडो से तॉबे का बना एक कूबडदार बैल का खिलौना, तॉबे के कलश में रखा हुआ पीतल निर्मित बकरी का खिलौना तथा तॉबे ओर पीतल के बने कुत्तों के अनेक खिलौने अति सुन्दर एवं सजीव है। चन्हुदडो से पीतल का एक बतख प्राप्त हुआ है। कुछ मूतियॉ ऐसी सुन्दर है, जैसी ऐतिहासिक युग में पायी जाती है। मोहनजोदडो से प्राप्त एक नर्तकी की मूर्ति मिली है, जो दायें पैर पर खडी एवं बायें पैर को सामने की ओर उठाये है। इसमें सन्देह नहीं कि इस मूर्ति की भावभंग्मिा अत्यन्त सुदर और हृदयग्रही है। सिन्धु सभ्यता की मूर्तिकला के सम्बन्ध में जॉन मार्शल ने लिखा है कि, ''सिन्धुघाटी की कला और धर्म भी उतने ही विचित्र है और उन पर अपनी एक विशिष्ट छाप है। इस काल में हम अन्य देशों में कोई ऐसी वस्तु नहीं जानते जो शैली की दृष्टि से यहॉ बनी मूतियॉ से साम्य रखती हो।'' उनका कहना है कि ये मूतियॉ इतनी सुन्दर है कि चौथी शताब्दी ई.पू. कोई भी यूनानी कलाकार इनको अपनी कृति बताने में गौरव अनुभव करेग।

हडप्पा सभ्यता की चित्रकला की जानकारी उनके मिट्टी के बतनों पर बने चित्रों तथा मुद्राओं पर अंकित आकृतियों से मिलती है। उस समय के चित्रकार रेखाओं और बिन्दुओं के माध्यम से बर्तनों पर चित्रकारी करते थे तथा उन पर हिरण, बकरी, खरगोश, कौआ, बतख, गिलहारी, मोर, सॉप मछली आदि पशु–पक्षियों और पीपल, नीम, खजूर आदि पेड– पौधो के चित्र बनाते थे। हडप्पा से प्राप्त बर्तनों पर मानव आकृतियॉ भी बनी मिली है। एक बर्तन पर एक मछुए का चित्र बना है जो बॉस पर जाल

लटकाये जा रहा है और उसके पैरों के पास मछली और कछुआ पडे है। मुद्राओं पर विविध प्रकार के पशु आदि चित्रित है।

कला–कौशल– नगर–योजना और भवन–निर्माण का वर्णन करते हुए स्थापत्यकला के संबंध में हम कह चुके है। श्रृंगार और सौंदर्य का अभाव रहते हुए भी मकान बनाने की कला काफी विकसीत थी। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि भवननिर्माण–कला में सिंधुघाटी के निवासी उस समय अद्वितीय थे। ईटो से चौकारे मकान बनाने की कला सिंधसभ्यता ने ही भावी भारत को दी थी। सिंधुघाटी के कला–कौशल्य का विवेचन हम वहॉ से प्राप्त मुद्राओं, ताबीजों और मूतियों के आधार पर कर सकते है। वहॉ की मूतियों को हम तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं– (क) बच्चों के खिलौने, (ख) पूजा की मूण्मूतियॉ, और (ग) ऐसे खिलौन जो समाधि में रखे जाते थे। मिट्टी के बरतनों की कला बहुत ही प्रौढ तथा विकसित थी। बरतनों पर चित्रकारी बहुत सुंदर होती थी चित्रकारी के विशेषतः मनुष्य की आकृति का ही चित्रण हुआ है। मोहनजोदडों में पत्थर की एक मूर्ति प्राप्त हुई है, जिसे श्री रामप्रसाद चन्दा योगी की और मैके महोदय पुजारी की मूर्ति मानते है। इस मूर्ति में केवल धड ही शेष है। प्राचीन बेबिलोन में पुरोहित इस मूर्ति की पहनावे–जैसे वस्त पहनते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि मूतियों पर सजावट के लिए रंग भी लगता था। सबसे महत्वपूर्ण शिल्प की दो मूतियॉ हडप्पा से प्राप्त हुई है। इन मूतियों से ज्ञात होता है कि उस काल के कलाकारों को छेनियों तथा हथियारों पर कितना अधिकार था मार्शल महोदय ने ठीक कहा है, ''ई. पू. चौथी शताब्दी का कोई यूनानी कलाकार इस मूर्ति को स्वनिर्मित कहने में गौरव समझता ।'' वास्तव में, जहॉ तक शरीर–सौष्ठव एवं सुंदरता का प्रश्न है, यूनान की कला का कोई मुकाबला नहीं। लेकिन लालपत्थर की बनी पुरूष की यह नंगी मूर्ति मध्य–पूर्व की प्राचीन मूतियों में सर्वोत्तम है।

---

(8)अधिवेशन (1959) में भारतीय इतिहास कांग्रेस में डॉ. ए.एस अल्तेकर का अभिभाषण। Journal of the the bihar and Orissa Research society (1928) में प्रकाशित बी. बी. राय का लेख।

वहॉ की अन्य मूतियॉ शिल्प के दृष्टिकोण से निम्नकोटि की है। एक सुंदर सॉड की मूर्ति भी मिली है। नर्तकियॉ की कॉसे की मूतियॉ भी मिली है। सोने और चॉदी के भी सुंदर एवं आकर्षक आभूषण प्राप्त हुए है। दोनो बनाने की कला में भी सिंधुघाटी के लोग अपने समय में अद्वितीय थे।लाल अकीक के दाने का 654456545465 विशेष प्रचार था। मिट्टी के बरतानों पर आकर्षक डिजाइन और चित्र बनाए जाते थे। हडप्पा के सभी स्थानों से प्राप्त बरतनों की चित्रकारी बहुत ही सुंदर है। ऐसा प्रतीत होता है कि सिंधुप्रांत में कुंभकार–कला खूब फूली–फली । उन दिनों सिंधुप्रांत में कई कलाऍ अभ्युदय की पराकाष्ठा पर पहुंच चुकी थी बरतनों पर लाल पालिश के उपर काले रेंग के प्रयोग की शैली थी संसार के अन्य किसी प्राचीन देश को ज्ञात नहीं थी। यह सिधू–उपत्यका की स्थाली शैली थी। अत; परवर्ती भारतीय कला सैंधव कला की ऋणी है, इनमें संदेह नहीं। लंबे नेत्र तथा नेत्रों का नासिका के अग्रभाग में स्थिर होना बाद की भारतीय कला में भी प्राप्त है। भारत की मूर्तिकला का शिलारोपाण करने का श्रेय उन्हीं लोगों को दिया जाएगा। श्री दीक्षित का विचार है कि योगी मूर्ति भारतीय मूर्तिकला का सर्वप्रथम उदाहरण है। यह भी संभव है कि वहॉ की कला धर्म से कुछ हद तक प्रभावित हुई हो। कुछ विद्वानों के अनुसार धर्म एवं कला एक ही अनुभव के दो नामक है। मुद्राओं के निर्माण में भी सिंधुसभ्यता के निवासी बडे कुशल थे। एक शाखा के कलाकारों ने मुद्राओं तथा ताम्रपट्टियों पर चित्रांकन में कुशलता प्राप्त की और दूसरी शाखा के कलाकारों ने मिट्टी के खिलौने बनाए। तक विद्वान ने कुशलतापूर्वक निर्मत मुहरों और आमार्जित कलाकृतियों के इस भेद का सैंधव सभ्यता का प्रमाण माना है। कलात्मक वस्तुओं के निर्माण में चिकनी मिट्टी, काली मिट्टी, चीनी मिट्टी , साधारण पत्थर, चूना–पत्थर, लाल पत्थर, सिखारी पत्थर, हरा अमेजन पत्थर, वैदूर्य पत्थर, नीला स्फटिक, लाल स्फटिक, सीप, घोंघा, हड्डी, हाथीदॉत, सोना, चॉदी, पीतल, तॉबा, सीसा आदि का प्रचूर मात्रा में व्यवहार होता था।

कलाकृतियॉ हाथ और सॉचे दोनों से बनती थी। वे लोग धातू गलाना जानते थे; क्योंकि मोहनजोदडो में गले हुए तॉबे का ढेर मिला है। लाल, पील, और हरे रंगे का भी उन्हे ज्ञान था। ध्यान देने योग्य है कि कलाकृतियों में उपयोगिता और दास्तविकाता पर जितना ध्यान दिया गया, उतना कल्पना और आदर्श पर नहीं। मिट्टी के बरतन चाक पर बनाये जाते होंगे, ऐसा अनुमान लगया जा सकता है। बाद में उन्हें आग के भट्ठों में पकाया जाता था। मोहनजोदडों और हडप्पा में इस प्रकार के कई भट्ठे भी मिले है। हडप्पा के बरतनों पर लेख भी मिलते है। इन बरतनों का अलंकरण भी होता था। हडप्पा के बरतानों पर कुछ मानव–आकृतियॉ मिलती है, परंतु साधारणतः बरतनों पर पशु–पक्षियों के ही चित्र है।

मुद्राऍ चीनी मिट्ट अथवा साबुन–पत्थर की बनती थी। अधिकांश मुद्राऍ हाथ से बनाई जाती थीं खुदाई में मुद्रा ढालने के सॉचे अथवा ठपपे नहीं मिले है। कुछ मुद्राऍ ताबीजें हो सकती है। अनेक मुद्राओं पर और इनसे सैंधव कलाकारों के उच्चकोटि के हस्तलाघव का ज्ञान होता है। मिट्टी की मुद्राऍ काफी महत्वपूर्ण है। पशुओं से घिरे हुए योगीश्वर शंकर की मुद्रा मिट्टी की है। हडप्पा से प्राप्त मिट्टी की ताबीज पर ढोल बजाए जाने का दृश्य है। मिट्टी की मूतियॉ दो प्रकार की मिली है– धार्मिक महत्ववाली नहीं है। मोहनजोदडो में एक द्विमुख देवता की मृण्मूर्ति मिली है। इसके अतिरिक्त, मूत्तिका–निर्मल लिंग और योनियॉ भी मिली है, जिनकी पूजा होती थी। सामान्य मूतियॉ में अन्य सारी मूतियॉ सम्मिलित है। खिलौनों की कोई कमी नहीं है। पाषाण की मूतियॉ और खिलौन कम मिले है। पाषाण–स्तंभ भी यत्र–तत्र मिले है। पाषण काटने और तराशने में सैधव कलाकरों ने बडी दक्षता प्राप्त कर ली थी। धातुओं का प्रयोग भी कलात्मक वस्तुओं के निर्माण के लिए होता था। मोहनजोदडो में तॉबे कर बना हुआ एक कूबडदार बैल और तॉबे के एक कलश के अंदर बकरी–जैसे खिलौने मिले है। मोहनजोदडो में पीतल की बनी नर्तकियॉ भी मिली है। चॉदी और सोन का प्रयोग आभूषण के लिए होता था। गुडिया–निर्माण–कला में सैधंव लोग विश्वप्रसिध्द थे। चन्हुदरों में गुडियॉए–निर्माण का एक कारखाना भी था। यहॉ से गुडियाऍ विदेशों में भेजी जाती थी। सोने–चॉदी के अतिरिक्त मिट्टी, पत्थर, हाथीदॉत, घोंघ आदि पदार्थो को भी गुडियाऍ बनती थी। इन गुडियॉ पर रंग और पालिश भी है।

सिंधुघाटी के लोग सूत कातने और वस्त्र बुनने की कला से भी पूर्णतःपरिचत थे। ये लोग सूती और रेशमी दोनों तरह के वस्त्र तैयार करते थे। नृत्यकला और संगीतकला से भी परिचित थे। कॉसे की बनी हुए एक नतकी की मूर्ति मिली है, जो कटिप्रदेशे पर एक हाथ रखे त्रिभंगी मुद्रा में नाचने के लिए पाद–प्रक्षेप के लिए उद्यत है। लेखकला का आविष्कार हो चुका था, किंतु लिपि चित्रकला की अवस्था में थी। अभी तक वहाँ की लिपि सही ढंग से पढी नहीं गई है। 1 प्राप्त अवशेषों से इनके उच्च सौदर्य प्रेम का परिचय मिलता है। नर्तकी–मूर्ति की तुलना का दूसरा कोई भी उदाहरण इतिहासकालीन कला के क्षेत्र में प्राप्त नहीं है। यह मूर्ति अपनी उपमा आप प्रतिष्ठित करती है।

नगरों का विनाष– मोहनजोदडों के ध्वंसावशेषों में पुरातत्वविज्ञों ने नौ तह पाई है जो भिन्न–भिन्न कालों की सूचना देती है। मोटे तौर पर विद्वानों ने ध्वंसावशेषों को तीन प्रमुख कालों में विभक्त किया है– (1) प्राचीनतम, (2) मध्य, और (3) नवीनतम। प्रथम दोनों कालों में सिन्ध प्रदेश में शासन और व्यवस्था सुचारू रूप से कार्य करती रही। परन्तु तृतीय काल में कुछ कारणों से शासन और व्यवस्था शिथिल पड गई।

लोग राजकीय नियमों एवं प्राचीन परम्पराओं का उल्लंघन करनें लगें थे। इस काल में निर्मित मकानों में पहले जैसी व्यवस्था और शोभा का अभाव खटकता है। लोग जगह–जगह पर अतिक्रमण करने लगे। कमानों का आकार–प्रकार भी छोटा होता गया। निर्धनता के कारण लोगों ने दुमंजिला मकानों का निर्माण करवाना ही बन्द करवा दिया। तृतीय काल मोहनजोदडो की सभ्यता का अवनति काल था। यही स्थिति अन्य हडप्पाई नगरों की थी और अन्त में हडप्पाई नगरों का पतन हो गया।

हडप्पाई नगरों का विनाश कैसे हुआ, यह प्रश्न आज भी विवादपूर्ण बना हुआ है। खुदाई में सात सतहें प्राप्त हुई है जिनसे पता चलता है कि यहाँ की सभ्यता का विनाश कई बार हुआ और कई बार उसका निर्माण हुआ। बार–बार के विनाश और स्थान पर पुनर्निर्माण यह सिध्द करता है वह गतिहीन नहीं थी। हडप्पा संस्कृति के आन्तरिक विकास के अनुसन्धान ने उसके नगरों के जीवन मे अनके सुस्पष्ट दैरों को प्रकट किया है। उनके चरमोत्कर्ष के बाद पतन का दौर आया। मोहनजोदडो, हडप्पा, कालीबंगा आदि में उद्‌घाटित प्रमाणों से यह बात खासकर स्पष्टता के साथ सामने आती है तथाकथित उत्तरवर्ती कला में मोहनजोदडों में निर्माण कार्य किसी सुनिश्चित योजना के बिना हुआ था और उस समय तक कुड बडी सार्वजनिक इमारतें खण्डकर भी होने लगी थी और उनका स्थान छोटी इमारतों ने ले लिया था। इस समय भवन–निर्माण प्रणाली में भी ह्रास दृष्टिगत होता है। अनेक भवनों में न ईटों का संगठन ठीक है और न उनकी जुडाई। दीवारों में ईटे टेढी–मेढी और छोटी–बडी लगाई गई है। उनके ं बीच में बडी–बडी दरारें रह गई है। जल–संभरण व्यवस्था भी इस समय अस्त–व्यस्त तथा टूटने–फूटने लग गयी थी। हडप्पा में भी इमारतें खण्डहर हो रही थी। व्यापार–वाणिज्य एवं उद्योग–धन्धें भी चौपट होने लगे। मिट्‌टी के बर्तन का ढंग भी बदल गया और अलंकरण कम हो गया था और घटिया किस्म का था । हड़प्पाई नगरों के पतन के सम्बन्ध में लम्बे समय तक यह माना जाता रहा कि उनके पतन का तात्कीलीन कारण आर्यगणों का आक्रमण था । हडप्पाई सभ्यता के लोग शान्तिप्रिय थे और के निरन्तर आक्रमण सें परेशान होकर वे दाक्षिण भारत की ओर चले गये । आक्रमणकारी का संकेत मिलता है । बलूचिस्तान के तीन स्थलों –राना घुंडई नाल और डाबरकोट के सन्दर्भ में अग्निकांड और लुटमाप तथा तहस–नहस के साक्ष्य मिलते है । गार्डन चाइल्ड ने हड़प्पा संस्कृती के अन्त के लिये आर्यो के उस पर हावी होने की सम्भावना व्यक्त की हैं । व्हीलर महोदय भी ऐसा ही मानते हैं। व्हीलर साक्ष्य के तौर पर हा मोहनजोदड़ो के अन्तिम स्तर से प्राप्त स्त्री,पुरुष एवं बच्चों के कंकालों का ,जिनमें कुछ पर पैने शास्त्रों के घाव के निशान हैं और जो सम्भवतः सामूहिक रूप से मौत के घाट उतारे गये थे,उल्लेख करते हैं । प्राप्त व्हीलर मानना हैं कि मोहनजोदड़ो का अन्त विध्वंसात्मक रहा ।

लेकिन अपेक्षाकृत हाल के अनुसन्धानों ने प्रकट किया है कि कई पतन आन्तरिक कारकों के फलस्वरूप विदेशी कबीलों के आने के पहलें ही शुरू हो चुका था । इन स्थानीय कारणों में सें कुछ जमीन का खारी होना ,बाढे, राजस्थान मरूस्थल का प्रसार ,नदियों की धाराओं का बदलना ,भूकम्प आदि हो सकते थे । मोहनजोदड़ो क्षेत्र में अनुसन्धान सें एक जलविज्ञान अभियान नें यह निष्कर्ष निकला कि बहुत समय पहले हुये एक विक्षोभ का अधिकेन्द्र इस नगर के पास ही था, जिसके कारण यह नष्ट हो गया । अन्य विशेषज्ञों का मानना हैं कि मोहनजोदड़ो के विनाश का मुख्य कारण बाढों का शिकार बनना पडा हो । हड़प्पा संस्कृती अधिकांश नगर नदियों में प्रायः प्रतिवर्ष बाढ़ों शिकार बनना पड़ा हो । हड़प्पा संस्कृती अधिकांश नगर नदियों कें तट पर स्थित थे और इन नदियों में प्रायः प्रतिवर्ष बाढ़ का आना एक साधारण बात थी । मार्शल के निर्दशन में किये गये उत्खनन में मोहनजोदड़ो की विभिन्न सतहों से जीम बालू के रूप में बाढ़ के प्रकोप के प्रमाण प्राप्त हुये हैं । मैके महोदय के अनुसार चन्हुदड़ो ं में भी लोगों के नगर छोड़ने में बहुत अंशो में बाढ ही उत्तरदायी हैं । वहॉ पर अन्तिम चरण में भयंकर बाढ़ के साक्ष्य के रूप में जीम रेत की तह हैं । मैके का मानना है कि यहॉ के निवासी बाढ़ से बचने के लिये अन्य उॅचे स्थलों की ओर चले गये जिससे उनकी संस्कृती की विशिष्टता समाप्त हो गई । राव महोदय को लोथल तथा भगवाव (दक्षिणी गुजरात) में कम–से–कम दो भीषण बाढों के आने के प्रमाण मिले हैं। उनका अनुमान है कि हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में उसी के आस–पास भयंकर बाढ़ आई होगी । भीषण बाढ सें खेती नष्ट जाती होगी,मकान धराशायी हो जाते होंगे । नहरे बालू से पट जाती होगी और लोग अन्यत्र स्थानों पर बसने के लिये विवश होते होंगे । परिणामस्वरूप इन नगरों का क्षेत्र पहले से कम होता गया और पतन के स्पष्ट होने लगे ।

डेल्स महोदय ने मकरन के आधुनिक समुद तट से कई मील भीतर की भूमि में प्राचीन समुतट के चिहन खोज निकाले । हड़प्पा संस्कृति के तीन महत्वपूर्ण नगर –सुत्कगेण्डोर ,सोत्काको और बालाकोट आज समुद्रतट से मीलों दूर हैं , परतु यहाँ किये गये अनुसन्धानों से पता चला हैं। कि वे कभी समुद्रतटीय भूति का सतत ऊपर उठना , नदियों की लाई हुई मिट्टी के जमाव से उनके मुहानों का अवरूद्ध होना और स्थान –स्थान पर हवाओं द्वारा रेत का जमा किया जाना –इन प्राकृतिक कारणें ने उपर्युक्त नगरों को समुद्रतट से दूर कर दिया परिणाम स्वरूप हड़प्पा नगरों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध कम होते गये और अन्त में टूट गये । इससे इन नगरों की सम्पन्नता जाता रही और लोग आजीविका की तलाश में अन्यत्र चल गये ।

घोष महोदय का मत है कि कुछ स्थानों पर आर्द्रता का हास और उससे उत्पन भूमि की शुष्कता का विस्तार हड़प्पा सभ्यता के अन्त के लिये महत्वपूर्ण कारण रहा । उनका कहना हैं कि सरस्वती नदी के क्षेत्र में हड़प्पा संस्कृति के स्थल ,जबकि यह नदी निश्चित रूप से जीवन्त थी ,नदी के तट पर पाये गये,परन्तु उत्तर हड़प्पा संस्कृति के स्थल उस स्थान पर पाये गये जो पहले नदी का तल था । अर्थात लोगों के इस क्षेत्र में रेगिस्तान का प्रसार होता चला गया होगा और लोग अन्यत्र चल गये होंगे। बीरबल साहनी महोदय का मानना हैं कि लगभग 3000–1800 ई.पू.तक राजस्थान के क्षेत्र में पर्याप्त आर्द्रता और हरियाली थी । परन्तु इसके बाद शुष्क जलवायु का परिवर्तन हो रहा हो । यहॉ पर हड़प्पा संस्कृति के अवशेषों पर किसी अन्य संस्कृति के अवशेष नही मिलते । इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि यह स्थल सदैव के लिये निर्जन हो गया । डेल्स महोदय का मानना है कि घग्घर और उसकी सहायक नदियों कि दिशा परिवर्तन के कारण बस्तियों में पीने और सिंचाई के लिसे जल अभाव हो गया होगा और यही उनके पतन का कारण बना । माधवस्वरूप वस्त भी हड़प्पा नगर के पतन के लिये रवी नदी का दिशा–परिवर्तन मुख्य कारण मानते हैं। इस प्रकार ,नदियों के मार्ग– परिवर्तन का नगरों पतन के भारी योगदान रहा होगा । कुछ विद्वानो की धारणा हैं कि मानसूनी हवाओं को दिशा– परिवर्तन से सिन्धु क्षेत्र में वर्षा की कमी होती गई और इस क्षेत्र को सूखे की समस्या का सामना करना पड़ा अन्न का अभाव समुदायक के बिखरने का कारण गना गया ।

उत्तरकालीन हड़प्पा संस्कृतियॉ – हड़प्पाई सभ्यता का चरमोत्कर्ष काल सभ्यवतः बाईसवीं और उन्नीसवीं शती ई.पू.के बीच था । सिन्धुघाटी में मुख्य केन्द्रों के हास के बाद भी अन्य प्रवशों में हड़प्पा संस्कृति के नगर बने रहे थे ,यद्यपि कुछ भिन्न रूप में । भारतीय विद्वानो द्वारा राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, कठियावाड़ और कच्छ (धोलावीरा, सुरकोटड़ा, देशलपर ,कानपर, कुरून, रंगपुर, धांगे) आदि क्षेत्रों में की गयी नयी पुरातात्विक खोजें यह दिखता हैं कि ये बस्तियों के बाद की हैं । भारत के विभिन्न भागों का असमान विकास ताम्रपाषण काल में ओर अधिक स्पष्टता के साथ देखने में आता हैं । इस काल की पुरातात्विक खोजें मध्य तथा पश्चिमी भारत में विकासित हड़प्पा परस्पराओं के प्रभाव को प्रतिबिंबित करती हैं । देश के दक्षिणी तथा पूर्वी भागों कहीं कम स्पष्ट हैं । यही नहीं,समय के साथ–साथ हड़प्पा परस्पराओं के चिहन शनैः मिटते जाते हैं । यहॉ हम कालीबंगा और बनासकाठे की संस्कृतियों का ही विशेष रूप से अध्ययन करेंगे ।

राजस्थान की कालीबंगा की सभ्यता – सम्भवमः ऋग्वैदिक काल से सदियों पहले राजस्थान के रेगिस्तान क्षेत्र में समुद्र था तथा आहड़ (उदयपूर के निकट),द्वषद्वती (चौंतांग) और सरस्वती (घग्घर) नदियों उस समुद्र में गिरती थी । कहा जाता हैं कि प्राचीन ऋषियों ने यही कुछ मण्डलों की रचना की थी । ऋग्वेद सरस्वती एवं मरू – दोंनों का उल्लेख हुआ हैं । आहड़ द्वषद्वती और सरस्वती नदियों के कठियों पर मानव संस्कृति सक्रिय थी । इन कॉठों में उदिता विकसित सभ्यता और संस्कृति कुछ अंशों में हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो सभ्यता के समकक्ष एवं समकालीन सी थी । आज से लगभग पॉच –छः हजार वर्षा पूर्व इन घाटियों में मानव ने अत्यन्त सभ्यता का निर्माण किया था इनमें कालीबंगा और आहड़ की सभ्यता अत्याधिक महत्वपूर्ण है।

राजस्थान की सर्वाधिक प्राचीन एंव महत्वपूर्ण सभ्यता के चिहन द्वषद्वती और सरस्वती नादियों की घाटी से प्राप्ती हुये है । प्राप्त अवशेषों का अध्ययन करते के बाद पुरातत्वंताओं ने इस सभ्यता को सैन्धन सभ्यता (सिन्धुघाटी की सभ्यता) से भी प्राचीन बताया है । कार्बन – 14 तिथि निर्धारण की सहायता से विद्वानों ने यह निर्धारित है कि कालीबंगा में हड़प्पा संस्कृति के प्रारम्भिक स्तरों की तिथि बाईसवी शती ई. पू है और अन्तिम स्तर को अब अठारहवीं एंव सत्रहवी शती ई. पू का बताया जाता है । दुर्भाग्यवश कुछ प्राकृतिक कारणों के परिणामस्वरूप कालान्तर में सरस्वती नदी के लुप्त होने का उल्लेख पुराणों में मिलता है । इस सभ्यता के लोप होने के सन्बन्ध में डॉ गोपीनाथा र्शमा ने लिखा ह कि, ''सभ्यवतः

भूचाल से या कच्छ के रण के रेत से भर जाने से ऐसा हुआ हो । जो समुद्री हवाएँ पहले इस आरे से नमी लाती थी और वर्षा का कारण बनती थी , वे ही हवाएँ सुखी चलने लगी और कालान्तर में यह भू–भाग रेत बन गया । ''इन नदियों के कॉठों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है – कालीबंगा । कालीबंगा ,बीकानेर संभाग कके गंगानगर जिले में घग्घर नदी के किनारे पर स्थित है । डॅ. (प्रो.) चन्द्रिकासिंह सोमवंशी रिसर्च स्कॅालर के अनुसार ''धोलावीरा, कुरूर और कानमेर तथा सुरकोटडा का पतन सम्भवतः भुचाल से या फिर कच्छ प्रदेश में सूखी हवाओं के चलने से अत्यधिक रेत के जमाव होने के कारणों से सरस्वती नदी सूख गयी और बाद में भंयकर सामुद्रिक प्रकोपों , झंझा – झकोर तूफानी हवाओं आदि के एक ही साथ चलने से प्रलयकारी रूप करने पर इन तमाम नगरों का पतन हुआ था।''

उत्खनन कार्य – कालीबंगा की सभ्यता की जानकारी के लिये भारत सरकार के पुरातत्व विभाग ने यहॉ कई सोपानों में उत्खनन का काम किया । इस स्थान की सर्वप्रथम खाजे.श्री अमलानन्द घोष ने 1952 में की थी । उन्होंनें हड़प्पा संस्कृति के लगभग दो दर्जन स्थल ढूँढ निकाले जिनमें कालीबंगा प्रमुख स्थल है । तत्पश्चात 1961 से 1969 ई. के मध्य इस स्थल की खुदाई का कार्य श्री बी.बी. लाल ,श्री बी. के. थापर , श्री एम.डी.खरे , श्री के एम ,श्रीवास्तव था श्री एस. पी. जैन जैसे विख्यााात पुरातत्ववेताओं के निर्देशन में हुआ । कालीबंगा की खुदाई का कार्य पॉच स्तरों तक किया गया है । प्रथम एवं द्वितीय स्तरों को हड़प्पा से भी प्राचीन माना गया है तथा तीसरे , चौथे और पॉचवें स्तरों को हड़न्प्पा के समकालीन माना गया है ।खुदाई के लिये घग्घर नदी के (जिसका प्राचीन नाम सरस्वती था) दो टीलों को चुना गया जो आस –पास की भुमि में लगभग 12 मीटर की ऊँचाई पर थे और जिनका क्षेत्र 1/2 किलोमीटर के लगभग था । इनमें गहराई एंव चौड़ाई में खुदाई की गई । यहॉ की खुदाई से प्राप्त सामग्री के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रस्तर धातुकाल में , जबकि अन्य क्षेत्रों में विश्व की श्रेष्ठ एवं प्राचीनतम सभ्यताएॅ विकसिक थी , राजस्थान में उत्तरी – पश्चिमी भू –भाग पर भी एक श्रेष्ठ एवं समृध्द सभ्यता का विकास हो चुका था । इस समृध्द सभ्यता को यदि विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं से श्रेष्ठ नही कहा जा सकता तो समकक्ष स्तर की तो अवश्य कहा जा सकता है । यदि हड़प्पा और

मोहनजोदडो को सैन्धव की दो राजधानियॉ माना जा सकता है तो कालीबंगा को सरस्वती सभ्यता का एक महत्वपूर्ण केन्द्र कहा जा सकता है ।

निवासी – बूली के अनुसार सुमेर तथा सिंधु सभ्यताएँ एक ही मूल से निकली है । उनका विश्वास है कि वह मूल दजला – फुरात और सिंधु नदी के बीच कही है । हॉल के अनुसार सुमेर तथा द्रविड़ जातियॉ एक ही थी । उनका विचार है कि सुमेर निवासी भारत से ही बाहर गए थे । इसका प्रमाण वे बलूचिस्तानके ''ब्राहुई ' लोगो से देते है । बाहर फेलने में ये इलाम आदि स्थानों में मुद्रा छोड़ते गए । सुमेरप्रांत तथा सिंधुघाटी में समानत देखकर गॉर्डन चाइल्ड का यह विचार है कि दोनों के बीच जातिगत संबंध था । इस मत का समर्थन डॉ. बी. एस. गुहा भी करते है । ऐसा प्रतीत होता है कि अनेक तत्ववों के सम्मिश्रण से ही यहॉ की सभ्यता बनी थी और बाहरी तत्वों के होते हुए भी सिंधु – सभ्यता का अपना विशिष्ट व्यतिव था । विभन्न जातियों के सम्मिश्रण से इस सभ्यता का निर्माण हुआ था , ऐसा हम ऊपर कह चुके हैं । इस प्रदेश में अनेक जातियों के लोग रहते थे , परंतु सभ्यता का निर्माण भुमध्यसागरीय और अल्पाइन लोगो का विश्वास है । अस्थिपंजरों के वैज्ञानिक परीक्षण के आधार पर कर्नल स्युयल और अल्पाअइने लोगो का विशेष योगदान रहा होगा , ऐसा विद्वानों का विश्वास है । अस्थिपंजरों के वैज्ञानिक परीक्षण के आधार पर कर्नल स्युयल और डॉ. बी. एस. गुहा ने भी तीन जातियों के होने का प्रमाण दिया है । जब तक सिंधु – लिपि का ज्ञान नहीं हो जाता है , तब तक कोई निश्चित धारण स्वीकार नही की जा सकती है । वेदों अथवा पौराणिक अनुश्रुतियों के आधार पर हम इतना जानते है कि पश्चिमोत्तर भारत में आयों को असुरों से युध्द करना पड़ा था और कुछ लोग इस आधार पर यह अनुमान लगाते है कि सिंधुघाटी की निवासी और निर्माता असुर लोग ही थे ।

सर जान मार्शल ने यह स्पष्ट रूप से कहा है कि सिंधुसभ्यता के निवासी और आर्य किसी भी दशा में एक नही हो सकते । आर्य तो यहॉ के मूल निवासी थे अथवा नही , यह एक विवादस्पद प्रश्न है । सभ्यता के विकास का क्रम ग्राम से नगर और कृषिप्रधान से व्यापारप्रधान होता है । अत :, यह कैसे संभव हो सकता है कि नगर एवं व्यापारप्रधान सिंधुसभ्यता के पश्चात ग्राम्य एवं कृषिप्रधान वैदिक सभ्यता का उदय हो ?

इस संबंध में डॉ. राजबली पाण्डेय कहते है –'बदों और पौराणिक अनुश्रुतियों से पता लगता है कि मध्यप्रदेश के अपने प्रसार में आयों को पश्चिमोत्तर भारत के असुरों से काफी लड़ना पड़ा था । असुर जाति भाषा और संस्कृति में आयों के समान थी । आयों से पराजित होकर यह ईरान – सुमेर आदि में जा बसी । सिंधुघाटी की सभ्यता के निर्माता यही थे । '' 10 परंतु उनका भी सर्वमान्य नही है ।

(9) MORTIMER WHEELER "……….. the number of skeletons analysed to date is far small to support any generalized estimate the racias characters of the Harappans . All the can be said is that ,a smight be expected ,the population of the lndus cities was , as mixed as is that of most of their successors.
- S.R.Rao – ने लोथल से इस सभ्यता के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ा है । और देखि
-SUBBA RAO: Personality Of India;
ALLCHIN: The Birth Of Indian Civillisation.
(10) Gordon Childe – " ………a thoroughly individual and individual and independent civilization of her own "

Chandrikasinh Somvanshi
Research Scholor,Teacher's Fellowship in History , Adipur (Kutch).

Jashwantkumar Premjibhai Chandhari
Lunawadd, Panchmahal, (Gujarat)

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- Google Scholar
- EBSCO
- DOAJ
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Indian Streams Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.isrj.org